गुरु नानकदेव जी की विश्वव्यापी यात्राएँ

डाॅ. हरबंस कौर सागू

यात्राओं का उद्देश्यः-

गुरु नानकदेव जी की बाणी को पढ़ने और उनके जीवन के विवरण को पढ़ने और समझने के बाद, एक बात स्पष्ट हो जाती है कि जीवन भर उनका दृष्टिकोण मानवतावादी और आत्मपरक रहा है। बचपन में जब वे पढ़ रहे थे, जब वे सामाजिक रीति-रिवाजों और कर्मकांडों का पालन कर रहे थे, जब वे वैद्य को बीमारी दिखा रहे थे, जब वे काम कर रहे थे, उन्होंने किसी भी देहधारी व्यक्ति को सर्वशक्तिमान नहीं माना, और न ही उन्होंने हिंदू या मुस्लिम के अलगाव पर विचार किया। उनके लिए पंडित-मुल्ला, मंदिर-मस्जिद और आरती-नमाज एक समान ही थे। यह सर्वव्यापी, व्यक्ति-व्यवहार ही था जिसने हर जगह गुरु नानकदेव जी के मान-सम्मान को बढ़ाया। गुरु नानक देव जी की मानसिक स्थिति में परिवार और अन्य सांसारिक जिम्मेदारियों के साथ-साथ दुनिया की मानवता को भ्रम और पाप से मुक्त करना, सांसारिक रहस्यों को ठीक करना एक महान दायित्व था। अपनी विश्व यात्र से पहले, वह जागरूकता लाने के लिए तलवंडी और सुल्तानपुर के आसपास के क्षेत्रों में उपदेश देते रहे थे, लेकिन वे हमेशा मानवीय सिद्धांतों पर अपनी शिक्षाओं के दायरे का विस्तार करने के तरीकों के बारे में सोचते थे। वे किसी विशेष जनजाति, किसी विशेष शहर या किसी विशेष प्रांत से उधार लेने नहीं आए थे। उसकी नजर सारी दुनिया, सारी कौमों और सारे देश पर पड़ी। उन्होंने हर तरफ से शोक, पीड़ा और संकट की आवाजें सुनीं। तृष्णाओं में सारा संसार जलता हुआ प्रतीत होता था, इसीलिए सारा संसार उनके मिशन का कार्यक्षेत्र बन गया।

'बाबा देखे धियान धर जलती सभ पृथ्वी दिस आई.'1

गुरु नानक के भगवान एक थे और सभी के लिए सांझे थे, वह अकाल पुरख किसी एक देश या जाति के नहीं बल्कि पूरी मानवता के थे। उनके लिए सभी मनुष्य समान थे, पाँच तत्वों से बने, सभी मनुष्यों का अस्तित्व उसी निरंकार के आत्मज्ञान के कारण है। इसलिए उन्होंने इन शिक्षाओं का प्रचार करने के लिए घर, परिवार, बच्चों, पत्नी, माता-पिता, भाई-बहनों को कुछ समय के लिए छोड़ने का फैसला किया। जहाँ उन्होंने तलवंडी की जमीन को 32 साल तक निहाल किया, वहीं सुल्तानपुर में करीब साढ़े चार साल काम करके दौलतखान लोधी जैसे और अन्य को भी राजी किया। भाई गुरदास जी के अनुसार 'चढड्ढा सोधन धरत लुकाई'2, क्योंकि उन्होंने हर जगह असत्य का राज्य देखा और सच्चे धर्म और शर्म की कीमतें उड़ती देखीं।

परन्तु आप प्रबल अराजकता के स्थान पर, सच्चे धर्म और

लज्जा के दैवीय मूल्यों को प्रधान बनाना चाहते थे। दैवीय मूल्यों की सर्वोच्चता को स्थिर और सुरक्षित रखने के लिए परस्पर सौहार्द भी जरूरी था। इसलिए, गुरु नानक के शब्द 'न हिंदू और न ही मुसलमानय् सुल्तानपुर के लोगों को बहुत अजीब और आश्चर्यजनक लगे। यद्यपि इस भाषण में प्रेम और आग्रह था, सदियों से लुप्त हो चुकी साझी संस्कृति को पुर्नजीवित करने का सपना था, हिन्दू-मुसलमानों को मानवता और आत्म-स्तर पर एक

साथ आने की प्रेरणा भी थी, लेकिन इस क्रांतिकारी आवाज को कौन सुनता? यदि वह मुल्ला सुनेगा, तो उसकी शरीयत और प्रभाव क्षमता नष्ट हो जाती, यदि वह ब्राह्मण बात सुनेगा, तो उसके पाप और पाखंड का पर्दाफाश हो जाएगा और यदि वह योगी बात सुनेगा, तो उसकी मांग कर खाने की इच्छा समाप्त हो जाएगी और उसका चमत्कारी प्रभाव खत्म हो जाता। समकालीन धार्मिक नेताओं में से कोई भी सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ाने की हिम्मत नहीं रखता था।

कादी कूड बोलि मल खाई.। ब्राह्मण नावै जीआ घाई.। जोगी जुगत णा जाणे अंध।। तीने उजाड़े का बंध।3

सद्भाव की बात सुनने को कोई तैयार नहीं था। यही कारण है कि सभी हिंदुओं और मुसलमानों को गुरु नानक देव जी का यह नारा किसी राक्षसी या मानसिक झुकाव का प्रतीक लगा। इसलिए किसी ने आपके बारे में कुछ कहा तो किसी ने कुछ। आपने सभी अक्षम शब्दों को सुना और कहाः

कोई आखे भूतना को कहे बेताला। कोई आखे आदमी नानक वेचारा। भएया दीवाना साहा का नानक बौराना। हऊ हरि बिनु अवर ना जाना।4

गुरु नानक देव जी को हिंदुओं और मुसलमानों का धार्मिक भेदभाव बिल्कुल पसंद नहीं था। वे पक्षपात और अलगाव को सिरे से खारिज करते हुए उसकी भत्र्सना करते थे। अपनी बाणी में उन्होंने मनुष्यों का आपसी मेलजोल और आत्मा और ईश्वर के मिलन पर जोर दिया। इसके अलावा, उनकी बाणी मानवतावादी व्यक्तिफत्व के चरित्र का वर्णन करने पर जोर देती है। ये सभी दैवी गुण एक सिद्ध और सच्चे व्यक्तिफत्व के निर्माण में सहायक सिद्ध होते हैं। वास्तव में गुरु नानक देव जी ने एक सच्चे व्यक्तिफत्व के निर्माण के लिए ही अपनी विश्व यात्र शुरू की थी।

उन्होंने पहली बार संसार-भ्रमण का विचार अपने पिता मेहता कालू के साथ तब साझा किया जब वह केवल 20 वर्ष के थे। जब

उन्होंने अपने पिता से तीर्थ यात्र पर जाने की अनुमति मांगी तो मेहता जी ने कहा कि आपकी अभी-अभी शादी हुई है, तीर्थयात्र पर जाने के लिए बहुत उम्र पड़ी है5, यह बात सुन कर गुरु जी चुप हो गए क्योंकि अभी भाई मरदाना भी साथ चलने के लिए तैयार नहीं था क्योंकि उसने अपनी जवान बेटी के विवाह की बात की और कहा कि वह इससे पहले कहीं नहीं जा सकते। गुरु जी ने इस इच्छा को थोड़ा आगे बढ़ा दिया और सही समय की प्रतीक्षा करने लगे।

एक बार मेहता कालू ने भाई मरदाने को गुरु नानक जी का पता खोजने के लिए सुल्तानपुर भेजा और मरदाने ने अपनी बेटी की शादी के लिए मदद मांगी तब गुरु जी ने भाई भागीरथ को कह कर लाहौर के भाई मनसुख से वह सब वस्तुएँ मंगवा दी जिनकी मरदाने को जरुरत थी। मरदाना शादी का सामान लेकर तलवंडी आया और अपनी बेटी की शादी के बाद सुल्तानपुर गुरु साहिब के पास लौट आया।

वई नदी में प्रवेश की घटना के बाद गुरु जी ने मोदीखाना की नौकरी छोड़ दी और कोषागार से प्राप्त सारा धन गरीबों में बाँट दिया और विश्व भ्रमण के लिए पूरी तरह से तैयार हो गए, और भाई मरदाना को भाई फरिंदे के पास से रबाब भी ले कर दी। रबाब खरीदने के लिए पैसा बेबे नानकी जी ने दिया था। उन्होंने माता सुलखनी जी और

श्री लखमी चंद को मायके भेज दिया और कहा कि वे जब चाहें तलवंडी और सुल्तानपुर जा सकते हैं। माता जी ज्यादातर तलवंडी में ही रही थीं (अपने ससुराल, पति के घर) श्री चंद जी की देखभाल बेबे नानकी जी ने की थी।

गुरु नानक देव जी की उदासियों (यात्राओं) का उद्देश्य पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों को परिष्कृत और प्रबुद्ध करना था। यह उद्देश्य अपने आप में बहुत ही रचनात्मक और महत्त्वपूर्ण था। साथ ही मानवता के लिए भी फायदेमंद था। इसलिए, गुरु नानक ने जो उदासी की रीत चलायी, उस उद्देश्य के लिए बड़े साहस के साथ, उन्होंने पहले पूरे पंजाब में, पिफर भारत में और पिफर भारत के बाहर प्रचार किया। यद्यपि मध्य युग में किसी भारतीय का भारत से बाहर जाना

एक क्रांतिकारी घटना माना जाता था, गुरु नानकदेव जी ने ऐसा करने में संकोच नहीं किया। उन्होंने बड़े साहस और निडरता के साथ हर जगह उदासी के नारे लगाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भले ही उन्हें अपने सांसारिक वस्त्र उतारकर उदासी-भेष धारण करने पड़े। उन्हें उदासी के पहनावे में देखकर उनके पिता और परिवार को कुछ दुःख हुआ होगा लेकिन उद्देश्य इतना महान और रचनात्मक था कि पिता परिवार और उनके अपने परिवार ने अंततः गुरु नानक को इस उद्देश्य की सफलता के लिए आशीर्वाद और प्रोत्साहन के साथ आशीर्वाद दिया होगा।

सैयदपुर (सैदपुरद्धः

ऐसा लगता है कि लंबी यात्र गुरु नानक देव जी ने सैदपुर से शुरू की थी, जिसे अब एमिनाबाद कहा जाता है। बढ़ई भाई लालो

यहीं रहते थे। गुरु जी भाई लालो के साथ रहे और भाई मरदाना तलवंडी अपने परिवार से मिलने गए।

यहाँ रहते हुए गुरु जी प्रातःकाल घर से निकल जाते थे और अपने शरीर को लंबी यात्र के लिए तैयार करने के लिए घोर तपस्या

करने लगे। जहाँ उन्होंने रोड़ियाँ बिछाकर तपस्या की थी, वहाँ गुरुद्वारा रोड़ी साहिब स्थापित है। यह जगह पाकिस्तान में है।

यहीं रहते हुए उसकी मुलाकात सैयदपुर के जागीरदार मलिक भागो से हुई। वह लोगों पर बहुत जुल्म करता था और लोग इससे बहुत परेशान थे। उसने ब्रह्मभोज का आयोजन किया था और गुरु जी को भी आमंत्रित किया गया, लेकिन वे ब्रह्मभोज के लिए नहीं गए और जब बुलाने पर गुरु जी भाई लालो के साथ मलिक भागो के पास गए और उसने पूछा कि वह ब्रह्मभोज में क्यों नहीं आए, इसका उत्तर देते हुए गुरु जी ने कहा कि हम आपके व्यंजनों में गरीबों का खून देखते हैं और जब पूछा गया कि वे निचली जाति के लालो के घर में क्यों रहते हैं तो आपका जवाब था कि भाई लालो जिसे आप शुद्र कहते हैं, हम उसकी रोटी पर विश्वास करते हैं, क्योंकि वह दस उँगलियों से अर्थात् कड़ी मेहनत से काम करता है। कुछ दिनों बाद जब मरदाना तलवंडी से लौटे तो गुरु नानक ने भाई लालो से अनुमति ली और आगे बढ़े।

पाकपट्टõन:

उस समय सैयदपुर (सैदपुरद्ध से पाकपट्टठन तक का मार्ग सैदपुर से लाहौर और लाहौर से मुलतान तक सड़क के माध्यम से था और रावी नदी पर नाव द्वारा पहुँचा जा सकता था। तुलम्बा शहर रावी के दोनों किनारों पर आता था। इसका वर्तमान नाम मखदुमपुर है। कस्बे के बाहर सज्जन नाम के एक ठग ने एक सराए बनायी हुई थी और उसमें एक ठाकुरद्वारा (मन्दिरद्ध और एक मस्जिद बनायी हुई थी। बाहर, हिंदुओं और मुसलमानों द्वारा पीने के लिए पानी के अलग-अलग

घड़े रखे गए थे। जब गुरु जी मरदाने सहित इस स्थान पर पहुँचे तो सज्जन ने रात को रोटी खिलायी और सभी प्रकार की सेवा की और अनुरोध किया कि वह थक गए हैं और कुछ रात आराम करने के लिए कहा। गुरु जी उसके इरादे जान गए और मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और उन्होंने निम्नांकित शब्द का गायन किया

ः

ऊजल कैहा चिलकना घोटिम कालड़ी मसु।। धोतिया जूठी न उतरै जे सऊ धोवा तिस।।6

वह सज्जन सोचने लगे कि इस शब्द में वर्णित ये सभी अवगुण मुझमें मौजूद हैं। तब उसकी समझ में आया कि यह फकीर दिल को जानने वाला है।7 वह गुरु जी के पैर पकड़ कर बहुत रोया और अपनी भूल को क्षमा करने की प्रार्थना करने लगा, और आगे से सचमुच का सज्जन बन कर लोगों की सेवा के लिए अपना सबकुछ अर्पित कर दिया। उसने अपनी धर्मशाला को सच्चा धर्मसाल बना लिया और आने वालों की सेवा करने लगा। रात में गुरु जी और मरदाना ने उसके यहाँ विश्राम किया, सज्जन ठग को सज्जन बना दिया और आगे बढ़ गए।

पाकपट्टठन में शेख इब्राहिम के साथ मेलः

गुरु नानक साहिब तुलम्ब से हड़प्पा आए और पिफर शोरकोट से डेरा इस्माइल खान और पाकपट्टठम पहुँचे। शहर के बाहर डेरा डालने के बाद, उन्होंने मरदाने को रबाब बजाने के लिए कहा और निम्नलिखित श्लोक का कीर्तन शुरू कर दिया। वर्तमान में शेख ब्रह्म,

जिनका पूरा नाम शेख इब्राहिम था, शेख फरीद जी के सिंहासन पर विराजमान हैं, लेकिन जन्म-साखियों में यह नाम केवल शेख ब्रह्म के लिए लिखा गया है। शेख ब्रह्म का एक अनुयायी जिसका नाम शेख कमाल था, लंगर के लिए लकड़ी इकट्ठाा कर रहा था। जब उसने देखा कि दो फकीर कीर्तन कर रहे हैं, तो वह आया और वहीं बैठ गया, जब उसने इस श्लोक का कीर्तन सुना।

‘आपे पट्टठी कलम आपि उपरि लेखु भी तूं।। इको कहै नानका दूजा कहे कू।।8

शेख कमाल बहुत प्रभावित हुए और खानगाह में जा कर अपने सिर से लकड़ियाँ उतारी और शेख इब्राहिम से कहा कि कोई दो फकीर आए थे जो ईश्वरीय-एकता के गीत गा रहे थे। इब्राहिम ने कमाल से पूछा, फ्ये फकीर हिंदू हैं या मुसलमान?य् तब कमाल ने कहा कि हिंदू हैं। इब्राहिम को आश्चर्य हुआ कि क्या कोई हिंदू ईश्वर की एकता में इतना विश्वास कर सकता है। अगले दिन इब्राहिम भी कमाल के साथ आए और गुरु जी और मरदाने को अपने साथ खानगाह ले गए और गुरु जी से पूछा कि वे हिंदू हैं या मुसलमान ? तो गुरु नानक देव जी ने कहा कि मैं पाँच तत्वों की मूर्ति हूँ और ये पाँच तत्व हिंदू-मुसलमान में एक ही हैं और दोनों मनुष्य ही हैं। हिंदुओं और मुसलमानों के लिए

भगवान की पूजा करने के दो तरीके हैं, लेकिन उन दोनों का लक्ष्य एक ही है। शेख इब्राहिम गुरु जी से बहुत प्रभावित हुए और शेख ने निम्नलिखित शब्द कहे और उनसे उनका आंतरिक अर्थ समझाने को कहा।

बेड़ा बन्धि न सकियुं बंधन की बेला। भरि सरवर जब ऊछलै तब तरण-दुहेला। हथ न लाई कोंसुभ्ड़े जलि जासी ढोला। इक आपिनै-पतली शह केरे बोला।

दुधा थणी न आवई पिफरि होई न मेला। कहै फरीद सुहेलिहो सहु अलाएसी।

हंस चलसी डुमणा अहि तनु ढेरी थीसी।9

इस शब्द की व्याख्या गुरमत दृष्टिकोण से गुरु नानक देव जी ने अपने इस श्लोक द्वारा की।

जप तप का बंध बेधाला जितु लंघाहि वहेला। ना सरवर ना ऊछ्ले ऐसा पन्थ सुहेला।

तेरा इको नाक मंजीठडा रता मेरा चोला सद रंग ढोला।10

शेख इब्राहिम गुरु से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने गुरु को कई दिनों तक खानगाह में रखा और सेवा की। गुरु जी के अनुरोध पर, उन्होंने फरीद जी की सारी बाणी दे दी, जो गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है। गुरु नानक देव जी ने भी बड़ी विनम्रता से उस बाणी का सत्कार किया। जन्मसाखी भाई बाला के संदर्भ में डाॅ. त्रिलोचन सिंह जी लिखते हैं कि, शेख इब्राहिम के अनुरोध पर, 'आसा की वार' की पौडिओं की रचना पाकपट्टठन में की गई और गुरु अर्जन देव जी ने गुरु ग्रंथ साहिब जी का संपादन करते समय इन पौडियों के साथश्लोक भी शामिल कर लिए। जन्मसाखी भाई मणि सिंह के संदर्भ से, डाॅ. त्रिलोचन सिंह जी लिखते हैं कि गुरु ग्रंथ साहिब का संपादन करते समय शेख इब्राहिम के डेरे की एक हस्तलिखित प्रति

भी गुरु अर्जन देव जी द्वारा मंगवायी गई थी।11 कुछ दिन यहाँ रह कर गुरु नानकदेव जी पूर्व की ओर यात्र को चल दिए।

कुरुक्षेत्राः

पाकपट्टठन से गुरु साहिब सतलुज नदी पार कर सरसा जाने वाले रास्ते पर निकल पड़े। गुरु नानक की याद में यहाँ एक पुराना गुरुद्वारा भी है। यहाँ से थानेसर जाते हुए गुरु जी भाई मरदाने के साथ करा और पहोवे होते हुए कुरुक्षेत्र पहुँचे। करा तहसील कैथल (जिला करनालद्ध पहोवे से सात मील पश्चिम में है। यहाँ राजा उदय सिंह ने गुरु जी की याद में एक गुरुद्वारा बनवाया था। पहोवा एक हिंदू तीर्थ है। सरस्वती नदी पहले यहीं से होकर गुजरती थी। कहा जाता है कि महाभारत के युद्ध के बाद पाडव भाइयों ने यहाँ आकर शुद्धि करवायी थी। यहाँ भी राजा उदय सिंह ने गुरु नानकदेव जी की स्मृति में एक गुरुद्वारा बनवाया था। यहाँ जो कुआं है वह गुरु नानक साहिब के समय का बताया जाता है, और बाद में गुरु हरगोबिन्द जी ने बऊली बनवायी थी।

कुरुक्षेत्र में कौरवों और पांडवों के बीच महान युद्ध हुआ था। जब गुरु नानक साहिब यहाँ पहुँचे तो सूर्यग्रहण लगा हुआ था। महाराजा रणजीत सिंह ने जिस स्थान पर वे बैठे थे, उस स्थान पर

एक गुरुद्वारा बनवाया था। यह गुरुद्वारा कुरुक्षेत्र तलाब के करीब है। गुरुद्वारा साहिब में एक कुआं छोटी ईंटों से बना है और इसलिए यह काफी पुराना प्रतीत होता है और इसका नाम गुरुद्वारा सिद्धबटी है।

यहीं पर एक राजकुमार और उसकी मां गुरु जी के पास पहुँचे थे। भाई मनी सिंह की जन्मसाखी में इसे पटना के राजा के रूप में लिखा गया है। डाॅ.कृपाल सिंह का मानना है कि यह राजा पटियाला के पास पटनपिंड से आया होगा। डाॅ.त्रिलोचन सिंह 'त्वारीख गुरु

खालसा' की गवाही देते हैं कि जगत राय, हांसी राज्य के राजा अमृत राय के पुत्र थे। इसने गुरु जी से आशीर्वाद माँगा कि इसे अपनी खोयी हुई रियासत का राज मिल जाए। गुरु साहिब ने कहा कि अगर वह संतों और गरीबों के लिए लंगर लगाते हैं तो भगवान उस पर दया करेंगे। लेकिन राजकुमार ने कहा कि उनके पास शिकार किए गए हिरण के अलावा कुछ नहीं है, इसलिए गुरु साहिब ने हिरण का मांस पकाने का फैसला किया। जब ऐसा किया गया तो धुंआ निकलता देख सारे पंडे खेत की ओर दौड़ पड़े और इस बात पर

झगड़ने लगे कि ग्रहण के दौरान यहाँ मांस क्यों पकाया जा रहा है। गुरु ने बहुत शांति से समझाया कि ग्रहण में लड़ाई-झगड़ा ठीक नहीं है। इन सब में से नानू पंडित बहुत तेज था और खुद को बहुत चालाक समझते था। इस पूरी बहस का सार गुरु साहिब ने अपने शब्दों में दिया है।

पहिला मसहु निमिया मासै अंदरि वासु।

जीऊ पाई मासु मुहि मिलिया हड चमु तन मासु।13 और

मास मास करि मूरख झगड़े गियान धियान नही जाने। कौउन मासु कौउन साग कहावै किसु महि पाप समाने।14 जब उन्होंने गुरु जी से इन शब्दों का अर्थ समझा, तो नानू

पंडित और उनके अन्य साथी गुरु जी से बहुत प्रभावित हुए और उनके अनुयायी बन गए।

हरिद्वारः

कुरुक्षेत्र से, गुरु साहिब ने वर्तमान पिपली मार्ग से जमुना को पार किया और गंगा के तट पर पहुँचे, जिसे हरिद्वार के नाम से जाना जाता है। गुरु साहिब जाकर हर की पौड़ी से करीब डेढ़ मील दूर बैठ गए। वह जिस स्थान पर ठहरे थे, उसे 'नानकवाड़ा' कहा जाता है। पहले यहाँ एक पुराना ईंट का बना गुरुद्वारा हुआ कर्ता था, जो आजकल दिखाई नहीं देता है। आप यहाँ बैसाखी के पर्व पर हरिद्वार पहुँचे थे। तीर्थयात्री गंगा में खड़े होकर पूर्व की ओर मुंह करके सूर्य को जल दे रहे थे। आप गंगा में खड़ा हो कर और पश्चिम की ओर जल देने लगे। जब कुछ लोगों ने आपसे पूछा कि आप पश्चिम की ओर पानी क्यों दे रहे हैं? तो गुरुजी ने पूछा कि तुम पूरब को पानी क्यों देते हो? फ्हम अपने पितरों को पानी दे रहे हैं,य् उन्होंने कहा। जब गुरु ने पूछा कि पूर्वज कहाँ थे तो उन्होंने कहा कि देवलोक में 49 करोड़ कोस पर है। यह सुनकर गुरु जी ने कहा कि लाहौर के पास मेरे खेत हैं और मैं अपने खेत में पानी दे रहा हूँ ताकि खेत सूख न जाए। सब हँसने लगे और कहने लगे कि लाहौर कहाँ है और हरिद्वार कहाँ है। गुरु जी कहने लगे कि अगर आपका दिया हुआ पानी करोड़ों कोस तक पहुँच सकता है तो लाहौर तो यहाँ से 200-250 मील की दूरी पर ही है, तो वहाँ पानी क्यों नहीं पहुँच सकता? तीर्थयात्रियों ने पूरी बात समझ ली और बहुत शर्मिंदा हुए और फोकट कर्मों के

बारे में समझ गए और गुरु जी से क्षमा मांगी। गुरु साहिब ने उपदेश दिया कि इन फोकट के कार्यों में कोई फायदा नहीं है, पितरों को वही मिलता है जो उन्होंने अपने जीवन में दान-पुन्य किया है। वे सभी गुरु जी के चरणों में गिर पड़े और उनके शिष्य बन गए। गुरु जी कुछ समय के लिए हरिद्वार में रुके और पिफर चले गए।

नानकमत्ते:

गुरु नानक देव जी हरिद्वार से कनखल और पिफर पहाड़ी रास्ते से कोट-दुवार तक पहुँचे। 'चरणपादुका' नामक गुरु की स्मृति में

एक पुराना गुरुद्वारा है। कोट दुआर से वह खुद पहाड़ी रास्ते से सीधे श्रीनगर (पौढ़ीद्ध और पिफर यहाँ से गुरु साहिब बद्री नाथ और केदारनाथ गए। केदारनाथ से वर्तमान जोशीमठ रोड होते हुए अंतधुर दर्रे से लेपुलेख के पास पहुँचे। लेपुलेख से गुरु साहिब शारदा नदी के किनारे अल्मोड़ा पहुँचे। अल्मोड़ा से एक पहाड़ी सड़क पर, दक्षिण की ओर हल्द्वानी, मंडी और लगभग 33 मील पूर्व में दुर्गा पीपल के माध्यम से एक जंगल में जिसे जोगियों का स्थान कहा जाता है, वहाँ गुरु जी पहुँच गए। गुरु जी जिस स्थान पर बैठे थे वह अल्मोड़ा से लगभग 25-30 मील पूर्व में है। इस जगह को अब 'रीठा साहिब' कहा जाता है और यहाँ गुरु जी की याद में गुरुद्वारा साहिब भी बनाया गया है।

16वीं शताब्दी के प्रारंभ तक पूरा क्षेत्र योगियों के मठों से भर गया था। उस समय पंजाब के उत्तरी भाग में कनफटे जोगियों का प्रबल जमाव था, जो सभी गोरख नाथ के अनुयायी थे। अल्मोड़ा के आस-पास यह मठ बना कर रहते थे।

जब गुरु जी इस स्थान पर पहुँचे तो मरदाना जी को बहुत भूख लगी और जब उसने योगियों से कुछ खाने के लिए कहा तो उन्होंने

मना कर दिया। गुरु साहिब ने मरदाने को कहा कि हम जिस पेड़ के नीचे बैठे हैं, वह उस पेड़ का फल खा ले। मरदाना उस पेड़ पर चढ़ गया और लगा रीठे खाने, जो कडवे होने के बजाय मीठे थे। मरदाने ने पेट भरकर खाए और उस स्थान का नाम भी 'रीठा साहिब' पड़ गया और लोग बड़ी श्रद्धा के साथ रीठा का प्रसाद लेने और दर्शन करने के लिए दूर-दूर से यहाँ आते हैं।

गोरख मत्ता या सिद्ध मत्ता, रीठा साहिब से लगभग 70 कि.मी. दूर है। यहाँ से गुरु साहिब सिद्ध मत्ते पहुँचे और एक पीपल के नीचे बैठ गए। यहाँ बैठकर गुरु साहिब ने मरदाने को धूणी जलाने को कहा।

मरदाना लकड़ी इकट्टòा करके जोगियों के पास आग लेने गया, लेकिन उन्होंने आग देने से इनकार कर दियाऋ पर किसी तरह मरदाना आग लाने में सफल हो गया और उसने धूणी जलायी। कहते हैं कि उस रात बहुत बारिश और आंधी-तूफान आया। सारी धूनियाँ बुझ गई और सिपर्फ गुरु नानक देव जी की धूणी ही जलती रही। सुबह उठकर जब पानी की जरूरत पड़ी तो मरदाना पानी मांगने गया और जोगियों ने पिफर मना कर दिया। गुरु नानकदेव जी मरदाने को उत्तर की तरफ जाने के लिए कहा। मरदाना दो या तीन फर्लांग पर गया और एक नदी से पानी लाया। (एक कहावत के अनुसार गुरु नानक साहिब ने अपनी आत्मिक शत्तिफ से मर्दाने को एक फोड़ी दे कर,

यह नदी पहाड़ों से मंगवायी थीऋ इसलिए इसका नाम फोड़ी गंगा है। द्ध यह पूरी नदी अब दीउहा बांध में आ गई है। स्थानीय सिखों के आग्रह पर, उत्तर प्रदेश सरकार ने फोड़ी गंगा के कुछ झरनों को एक कुएँ में बदल दिया है और इसकी दीवारों को एक पुल के माध्यम से बांध से जोड़ दिया है। कुएँ के दोनों ओर सीढ़ियाँ बनाई गई हैं ताकि तीर्थयात्री नीचे उतर कर चरणामृत ले सकें। बांध के साथ जो पानी

एकत्र किया गया है उसका नाम 'नानक सागर' है।

जब सिद्ध-जोगियों ने देखा कि उनकी ईष्र्या और शत्रा ुता का गुरु जी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है, तो वे चकित हो गए और उनके पास जाकर प्रश्न पूछने लगे कि आपका गुरु कौन है? और किससे आपने दीक्षा ली है? गुरु ने एक शब्द सुनायाः

कऊन तराजी कवण तुला तेरा कवण सराफ बुलावा..।। मन तराजी चित्त तुला तेरी सेव सराफ कमावा।

घट ही भीतर सो सहु तोली इन बिध चित रहावा। आपे कंडा तोलु तराजी आपे तोलण हारा।15

आपे देखे आपे बूझे आपे है वंजारा। अंधला नीच जाति परदेसी आवे तिल जावै।

ता की संगति नानक रहदा कियूं कर मूड़ा पावै।16

उपरोत्तफ श्लोक में गुरु साहिब ने अपनी शब्दावली में अपनी बात स्पष्ट की थी। योगियों की इस बात से संतुष्टि नहीं हुई और वे गुरु जी को जोगी बनने के लिए प्रेरित करने लगे। तो पिफर गुरु जी ने शब्द पढ़ाः

जोग न खिंथा जोग न डंडे जोग न भस्म चढ़ाइए।17

उपरोत्तफ शब्द में गुरुसहिब ने उनकी शब्दावली में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया था। जोगी समझ गए और उन्होंने गुरु जी को

नमस्कार की। गुरु जी कुछ दिन वहाँ रहे, जोगियों के साथ संवाद किया और पिफर आगे चल दिए।

टांडेः

गुरु नानकदेव जी नानक मत्ते से तकरीबन 60 मील दक्षिण की ओर वन्जारियों (व्यापारियोंद्ध के टांडे पहुँचे।। यह नगर अब मुरादाबाद से नैनीताल की सड़क पर है। यहाँ उन्होंने व्यापारी के प्रति एक शब्द का उच्चारण किया फ्पहिले पहरे रैन के वंजरिया मित्रा, हुकमी पयिआ गरभासिय् यहाँ कुछ दिन रुक कर और पिफर अयोध्या की ओर मुड़ गए।

अयोध्याः

डाॅ.त्रिलोचन सिंह और प्रधानाचार्य सतबीर सिंह जी ने गुरु साहिब के पहले प्रयाग या इलाहाबाद जाने का और बाद में अयोध्या जाने का जिक्र किया लेकिन डाॅ. कृपाल सिंह जी ने सबसे पहले अयोध्या जाने का उल्लेख किया है, जो ज्यादा ठीक लगता है। लेखिका भी कृपाल सिंह जी के मार्ग को ठीक मानती है। टांडा से, गुरु साहिब

खीरी जिले के एक नगर गोला पहुँचे, और वहाँ से चैकी दरिया (ब्रह्मघाट के पास घाघरा नदी में चैकी नदी का विलय हो जाता हैद्ध के पार नाव से और पिफर घाघरा नदी से होते हुए, मरदाने के साथ अयोध्या पहुँचे। अयोध्या में जहाँ आप जाकर बैठे थेऋ वहाँ

एक गुरुद्वारा बना हुआ है। यहाँ भी विभिन्न संप्रदायों के लोगों ने गुरु जी से कई प्रश्न पूछे कि कई लोगों ने शरीर को दर्द देकर, नग्न रहकर, उल्टा लटककर या यहाँ तक कि बड़ी तपस्या, यज्ञ और पुन्य-दान भी कहते हैं कि मोक्ष इनका ही होगा? कुछ देर तो गुरु जी चुप रहे और पिफर यह शब्द उचरित कियाः

जगन होम पुन्न तप पूजा देह नित दुःख सहे।

राम नाम बिन मुकति न पावसी मुकति नामि गुरमुखि लहै।18

प्रयाग:

अयोध्या से गुरु साहिब घागरा नदी से होते हुए टांडा, (जिला फैजाबादद्ध अयोध्या से 37 मील पूर्व में, यह एक प्रसिद्ध बंदरगाह था। यहाँ व्यापारी आते जाते थे। यहाँ से 12 मील पैदल चलकर मिझोली के इलाके पहुँचे जहाँ टानस नदी का बंदरगाह था। गुरु साहिब नाव से निजामाबाद (आजमगढ़ जिलाद्ध पहुँचे। यह टानस नदी के किनारे, गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा भी बनाया गया है। निजामाबाद प्राचीन काल से ही गुर-सिख धर्म का केंद्र रहा है। टानस नदी से लगभग एक फर्लांग पर गुरु साहिब के बैठने की जगह बतायी जाती है और यहाँ एक गुरुद्वारा भी है। प्रयाग, त्रिवेणी संगम निजामाबाद से लगभग 90 मील की दूरी पर है। निजामाबाद से लौटते हुए, प्रयाग नगर की भीड़ से कुछ ही दूरी पर गुरु साहिब रास्ते में ही झूसी रुक गए। कहा जाता है कि जहाँ गुरु साहिब बैठे थे, वहाँ

एक थड़ा (बैठे की जगहद्ध था जो समय के साथ गंगा नदी में खो गया।

एक बार गुरु जी अपने ध्यान में लीन गंगा तट पर बैठे थे, और कुछ तीर्थयात्री जो त्रिवेणी स्नान करके आए थे, गुरु के चेहरे पर नूर देखकर, उनके पास आकर बैठ गए। जब गुरु साहिब ने उनकी ओर देखा तो उन्होंने कहा कि हम रोज पाठ पूजा करते हैं लेकिन

कोई असर नहीं होता और कोई रस नहीं आता। गुरु साहिब ने समझाया कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, शरीर से जुड़े हुए विषय-विकार वास्तविक रस का आनंद नहीं लेने देते। यह सुनकर

यात्री बहुत प्रभावित हुए और नमस्कार कर, आगे बढ़ गए।

एक दिन कुछ तीर्थयात्री आए और उन्होंने बड़े आदर के साथ कहा कि लोग विभिन्न प्रकार के मानसिक विकारों से पीड़ित हैं, लेकिन पिफर भी मानसिक विकार ठीक नहीं होते हैं। गुरु ने बहुत ही शांति और प्रेम से कहा कि मन के विकार केवल मन में नाम बसाने से ही दूर हो जाते हैं और उन्हीं को इस दुनिया में महिमा मिलती है।

'नानक ता कौ मिले वडयाई जिस घट भीतर शब्द रवै'19

यह सुनकर सभी तीर्थयात्री प्रसन्न हुए और गुरु साहिब को कोटि-कोटि प्रणाम किया और गुरु साहिब कुछ दिनों तक यहाँ रहे और पिफर पूर्व की ओर चल पड़े।

बनारसः

पुरानी झूसी से एक सड़क निकलती थी जो गंगा नदी के उत्तरी किनारे पर बनारस की ओर जाती थी। यह सड़क मुसलमानों के आने से पहले से मौजूद थी। वैसे, प्रयाग से बनारस के लिए नाव से ही आवाजाही होती थी। बनारस प्रयाग से 89 मील दूर है। इसी रास्ते से गुरु जी प्रयाग से बनारस पहुँचे। वर्तमान बनारस रेलवे स्टेशन से कुछ ही दूरी पर, कामछा क्षेत्र में, गुरु नानक की स्मृति में एक

ऐतिहासिक गुरुधाम है, जिसे बहुत पुराना माना जाता है। स्थानीय परंपरा के अनुसार, गंगा राम ब्राह्मण सबसे पहले गुरु के पास गए और उनसे बहुत प्रभावित हुए और सिख बन गए। 'सूरज प्रकाश' के लेखक भाई संतोख सिंह के अनुसार काशी निवासी हरि लाल और हरि कृष्ण गुरु अर्जुनदेव जी से मिलने आए थे। भाई काहन सिंह के अनुसार, उन्होंने बनारस के आसपास सिख धर्म का बहुत प्रचार किया। ये दोनों गंगा राम ब्राह्मण के पौत्र थे।

एक दिन गुरु जी गंगा तट पर बैठे थे, वहाँ बहुत सारे पंडित पुस्तकें पढ़ रहे थे, कई शिष्य उनसे सीख रहे थे। कई तपस्या कर रहे थे और कई शमशान की धूल मुंह और शरीर पर मलकर बैठे थे। गुरु जी को देखकर वे गुरु जी के पास आए और उनसे पूछा कि तुम क्या कर रहे हो? सभी भजन-पूजा या पठन-पाठन में तल्लीन हैं। जवाब में, गुरु ने शब्दों का उच्चारण किया।

दुबिधा न पडऊ हरी बिन होर पूजऊ मढ़े मसाणी न जाणी।। त्रिसना राची न पर घरि जावा त्रिसना नामि बुझाई.20

ये लोग गुरु से बहुत प्रभावित हुए और उनके चरणों में प्रणाम किया। एक दिन पंडित चतुर दास ने गुरु के पास आकर पूछा। फ्हे भगत, न तो तेरे पास शालिग्राम है, न तुलसी माला, न चंदन-टीकाॠ तो तुम किस प्रकार के भगत हो?य् जवाब में, गुरु जी ने इन शब्दों का पाठ किया।:

साल ग्राम बिप पूजी मानवहु सुकृत तुलसी माला। राम नाम जपि बेड़ा बाधहु दया करहु दयिआला।। ... बगुले ते फुनि हंसुला होवै जे तूं करहि दयिआला प्रणवती नानक दासनी दास दया करहु दयाला।।21

शब्द सुनते ही उन्हें एहसास होने लगा कि अगर सालग्राम,

तुलसी की माला को भत्तिफ का प्रतीक मानते हैं तो ये भत्तफ इसे मिट्टठी की दीवार को सींचने जैसा प्रयास मानते हैं। उन्होंने भत्तिफ के सच्चे साधनों का भी वर्णन किया। जिसमें कर्मों के रूप में अच्छे कर्मों का बीज धरती में बोया जाता है, अगर बंदगी से सींचा जाए तो यह बगुला भी परमहंस बन जाएगा। चरण दास गुरु के चरणों में गिर पड़े। यहाँ के पंडित को अपनी शिक्षा पर बहुत गर्व था। उनके प्रति भी उन्होंने इन शब्दों का भी उच्चारण किया।

पढ़ी पढ़ी गढ़ी लदियाह पढ़ी पढ़ी भरिह साथ। पढ़ी पढ़ी बेढ़ी पाइए पढ़ी पढ़ी गढ़िये खात..।। नानक लेखे एक गल, होरु हुमई झकना झाक।22

गुरु नानक देव जी ने बहुत शुद्धि रखने के प्रति भी पांडे को बहुत विवेकपूर्ण होने का निर्देश दिया।

सूचे एहि न आखिए बहनि जे पिंडा धोई सूची सेई नानक जिन मनि वास्या सोइ।23

यहीं पर गुरु ने लकड़ियों को धोकर, जलाने वालों को निर्देश दिया थाः-

जे करि सूतक मनिए, सब ते सूटक होई.। गोहे अते लकड़ी अंदरि कीड़ा होई.।

जेते दाने अन्न के जीया बाझ न कोई.।24

गुरु जी जितने दिन बनारस में रहे, वे पंडित के साथ संवाद करते रहे और कुछ दिन वहीं रहने के बाद वे आगे बढ़े।

चंद्रौली

बनारस से पटना तक सासराम के रास्ते को तब और अभी भी शेर शाह सूरी मार्ग कहा जाता है। बनारस से करीब 20 मील दूर चंद्रोली एक पुराना शहर है। उस समय यहाँ के राजा हरिनाथ थे।

यह विचार डाॅ. यह कृपाल सिंह जी का है। प्राचार्य सतबीर सिंह व डाॅ. त्रिलोचन सिंह का मत है कि हरिनाथ राजा बनारस के थे। गुरु जी गया जाते समय यहाँ आ गए। गुरु जी चुपचाप बैठे रहे और किसी से बात नहीं की और न ही कोई इशारा किया। उनके प्रभावशाली व्यत्तिफत्व को देखकर जहाँ शहर के लोग दर्शन करने आये, वहीं राजा हरिनाथ भी उस स्थान पर आ गए। उसे देखकर, गुरु ने निम्नलिखित शबद गायन किया।

जीऊ तपत है बारो बार। तपि तपि खपै बहुत बेकार। जै तनि बाणी विसरि जाई, जिऊ पक्का रोगी विल्लाई.25

राजा को लगा कि 'जिउ तपत है बारोबर, तपि तपि खपै बहुत बेकार' गुरु जी ने उनकी मनःस्थिति का वर्णन किया है। उसे बहुत वैराग्य महसूस हुआ और वह गुरु जी के चरणों में गिर गया, और प्रार्थना की कि गुरु जी उसे अपने पास रखें, उसने भी राज्य छोड़ने का मन बना लिया, लेकिन गुरु साहिब ने उपदेश दिया कि 'राज में

योग' होता है, आप लोगों की सेवा करो और नाम बाणी का ध्यान करो। गुरु ने कहा कि हमारा ज्ञान संसार को छोड़कर राज्य छोड़कर भीख मांगना नहीं है। गृहस्थी में रहकर सिमरन सेवा करना ही हमारा मत है। ऐसा करने से राज्य में ही मोक्ष की प्राप्ति होगी।

गया:

बनारस से चंद्रौली और सासाराम होते हुए गुरु साहिब गया

पहुँचे। यह फाल्गु नदी पर एक हिंदू तीर्थ स्थल था। यहाँ एक बड़ा विष्णु-पद मंदिर है, जहाँ पूरे भारत से श्रद्धालु आते थे। एक परंपरा के अनुसार, जिनके बुजुर्गों की मृत्यु हो गई है, अगर उन्हें मुत्तफ करने के लिए यहाँ पिंडदान किया जाता है, जिससे वे मुत्तफ हो जाते हैं। जब पिंडदान किया जाता था तो वे चावल की पिन्नी और दीपक जलाते थे और उनका मानना था कि ऐसा करने से उनके पूर्वजों की गति हो जाएगी। जब गुरुसाहिब ने फाल्गुई नदी के किनारे बैठ कर ध्यान कर रहे थे तब पंडों ने आकर उनसे कहा कि वे वे भी अपने पितरों की गति करवा लें। उन्होंने कहा कि हमने अपना और अपने पितरों का दिया करवा दिया है। ऐसा कृत्य किया है कि अज्ञानता का अंधेरा दूर हो

गया है। स्वर्ग और नरक अज्ञान में हैं और नाम रूपी दीपक जगा लिया गया है। गुरु नानक साहिब ने वहाँ पण्डों को यह शब्द पढकर सुनाया।

दीवा मेरा एक नाम दुःख विचि पाइया तेल। ऊनी चानण उह सोखिया चूका जम सिउ मेल।26

इन शब्दों को सुनकर पंडित बहुत प्रभावित हुए और बड़े सम्मान से प्रणाम किया और चले गए। विष्णु पद मंदिर के साथ ही गुरु की स्मृति में एक गुरुद्वारा भी है। इस गुरुद्वारे का नाम देउ घाट है। इस गुरुद्वारे की सेवा बाबा अलमस्त जी ने गुरु हरगोबिंद साहिब जी के समय में की थी। यहाँ बाबा अलमस्त जी की मुहर भी पड़ी है। इस गुरुद्वारे में गुरु तेगबहादुर जी का एक हुकमनामा भी संरक्षित है। बुद्ध गया में, बाबा नानक को भिक्षु देवग्रिह मिला और वह गुरु साहिब का अनन्य भक्तफ बन गए। कहा जाता है कि वह भिक्षु गृहस्थ बना गया और उसका पौत्र भी गुरु हरिराय के दर्शन करने पंजाब आया। गुरु हर राय ने इसका नाम भगत भगवान रखा। (देखें डा॰. त्रिलोचन सिंहद्ध यहीं से गुरु जी नालंदा और राजगृह गए। यह गया से कुछ ही दूरी पर है। गर्म पानी के झरने थे, हर जगह जहाँ भी कुएँ खोदे जाते वहाँ पानी गर्म ही निकलता था। वहाँ के लोगों ने अनुरोध किया कि गुरु जी ठंडे पानी के बिना कष्ट सह रहे हैं। गुरु साहिब के आदेश से जहाँ कुआं खोदा गया, वहाँ ठंडा पानी निकल आया। यह कुआं आज भी मौजूद है और एक छोटा गुरुद्वारा भी है। जिसे गुरु जी की याद में बनाया गया है। मुझे (डा॰. हरबंस कौर सागूद्ध इस कुएँ और गुरुद्वारा साहिब के दर्शन करने का दो बार अवसर मिला। मुख्य परिचारक ने कहा, फ्हम संक्रांति के दिन कड़ाह प्रसाद बनाते हैं और इसे हमें ही खाना पड़ता है।य्

यहीं पर गुरु साहिब की मुलाकात कहलान शाह नाम के एक सूफी फकीर से हुई, जो गुरु साहिब से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने कई दिनों तक गुरु जी को अपने खानगाह में रखा। उस स्थान पर गुरुद्वारा बड़ी संगत विद्यमान है। जो स्थान सूफी संत का है उसे छोटी संगत कहा जाता है। बाद में गुरु तेगबहादुर भी यहीं रुके थे।27

हाजीपुर (पटनाद्ध

जब गुरु नानक साहिब यहाँ आए थे, उस समय पटना साहिब अभी आबाद नहीं हुआ था। कृपाल सिंह जी लिखते हैं कि उस समय

एक कच्ची सड़क पटना जाती थी। उस समय अशोक की राजधानी पाटलिपुत्र के पुराने शहर के खंडहर मौजूद थे। इन खंडहरों से होते हुए गुरु साहिब हाजीपुर पहुँचे। हाजीपुर, गंगा नदी के उत्तरी तट पर

आज के पटना शहर के सामने स्थित था जहाँ गंडक नदी गंगा नदी से मिलती है। गुरु नानक ने गंगा नदी को पार किया और उस स्थान पर बैठ गए जहाँ आज नानक का शाही गुरुद्वारा है। यह स्थान हरिहर

क्षेत्र के राम चैरा महल में स्थित है। भाई बाले की जन्मसाखी के संदर्भ में डा॰. कृपाल सिंह जी लिखते हैं कि हाजीपुर पहुँचते ही मरदाने को बहुत भूख लगी और गुरु जी ने उसे कुछ मांगने और

खाने के लिए जवाहर टोला भेज दिया। जब मरदाना सालसराय जौहरी के घर गया तो वह रोटी खा रहा था। उसका लेखापाल अदरखा बाहर आया और मरदाना को उसके मालिक के पास ले गया। सालसा राय ने देखा कि वह आदमी भूखा था और उसे पहला प्रसाद दिया और उसे कुछ पैसे भी दिए। जब मरदाने ने गुरु जी से कहा कि उन

अच्छे लोगों ने लंगर भी खिलाया है और यह पैसा भी दिया है, तो गुरु साहिब ने उन्हें पैसे वापस करने के लिए कहा। जब मरदाने ने पैसे लौटाए तो सालस राय जौहरी बहुत प्रभावित हुए और अपने लेखाकार अधरका को अपने साथ ले कर गुरु जी के दर्शन के लिए आए और प्रसाद के लिए पकवान भी लाए और कहने लगा कि मैं तो मरदाने को लाल समझता था पर आपके दर्शन करने पर तो सब तरफ लाल ही लाल है। गुरु ने कहा कि जिनकी आंखों में नाम रूपी लाल है, वे किसी और को नहीं देखते। गुरु के अमृत वचन सुनकर, सालस राय का मन शांत हो गया, उसने अभिवादन किया और भेंट स्वीकार करने को कहा। गुरु ने पकवान स्वीकार कर लिया लेकिन पैसे वापस कर दिए। गुरु ने सालस राय से कहा कि अधरखे में नाम प्रवेश कर रहा है और वह आध्यात्मिक रूप से उससे बड़ा है। इसलिए उसकी कदर की जानी चाहिए। यह सुनकर दोनों गुरु जी के चरणों में गिर पड़े।28

एक बार विष्णु के एक पुजारी ने गुरु नानक साहिब के पास आकर पूछा कि मन धन पदार्थ मांगता है और धन अहंकार के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता है और अहंकार से भगवान से दूर हो गया है। तो वह राम के पद तक कैसे पहुँचे तो उत्तर में गुरु जी ने

यह शब्द पढ़ा।

तन बिनसे धन का को कहिये। बिन गुर राम नाम कत लहिए। राम नाम धन संगी सहाई। अहनिस निरमल हरि लिव लाई।29

तब वैष्णव को शांति मिली और वह गुरु के चरणों में गिर पड़ा। गुरु ने अंत में कहा कि कोई दुर्लभ सालस राय जौहरी है जो दर्शन भेंट देकर जाता है। जिन्हें विधाता ने दृष्टि दी है, वे मानव जीवन के महत्त्व को समझते हैं, विषय विकारों में पड़ कर जीवन गंवाना ठीक नहीं है। ईश्वर की भक्ति, ज्ञान के बिना मनुष्य पशु के समान है। सालसराय में भीउत्साह और उमंग का फव्वारा फूट गया

और उसने गुरु उपमा में कहा

सतिगुरु दाता नाम का दीने खोल कपाट।

एक जो वनज वनंजिया बहुत न आवे घाट। सतिगुर नानक पूरा। बचन का सूरा।30

इसी सालस राय के वंशजों में से फतेह चंद मैनी दशवें पातशाह का परम भक्त हुआ, जिनके घर में दशवें पातशाह जाकर दूध की पूड़ियाँ, दूध से भीगे हुए छोले और तले हुए छोले खाते थे। उनके नाम की मैनी संगत आज भी विद्यमान हैं। अधरका के वंशजों में से घनश्याम, गुलाब राय, दसवें गुरु के मसंद, मूसा की संगत को आनंदपुर ले जाते रहे। जब सालस राय ने पिफर से मिलने का अनुरोध किया, तो उन्होंने जवाब दिया। 'गुरुमुखों को हमेशा दर्शन होते हैं'। जब उन्होंने 'आपकी खुशी कैसे प्राप्त करें' के बारे में बात की, तो गुरु जी ने कहाः-

जे चाहो प्रसन्नता

सेव करहु अधरका संता।31

उन्होंने पटना में लंगर की बुनियाद भी रखी। सब पंगत में बैठकर खाने लगे। यहाँ कुछ समय बिताने के बाद, गुरु साहिब और मरदाना आगे बढ़े। सालस राय ने अपने घर को एक धरम-साल बना दिया, और बाद में यहाँ

गुरु तेगबहादुरजी, उनके परिवार को यहाँ छोड़ कर, स्वयं, असम की ओर राजा राम सिंह के साथ (सिख धर्मद्ध के प्रचार के लिए निकल गए। यहीं पर दसवें गुरु का जन्म हुआ था और आज यह सिक्खों का पाँचवें में से चैथा तख़्त है।

ढाकाः

पटना से गुरु नानकदेव जी कटियार तहसील के कंतनगर नगर में, गंगा के किनारे, प्रसिद्ध नगर करगोला के पास, गंगा नदी के तट पर पहुँचे। गुरु साहिब की याद में एक पुराना गुरुद्वारा है।

कंत नगर से पूर्व की ओर चले गए। जहाँ गंगा नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है, वहीं उत्तर से बहने वाली महानंदा नदी इसमें मिल जाती है। इस क्षेत्र में गंगा का नाम कलंदरी है। कलंदरी और महानंदा नदियों के संगम पर मालदा नामक एक नगर था। यह शहर महानंदा और कलंदरी नदियों पर चलने वाली नौकाओं का एक प्रमुख केंद्र था। यहाँ गुरु जी कुछ समय के लिए रुके और यहाँ उनकी मुलाकात रामदेव (बाबूद्ध से हुई जो उनसे बहुत प्रभावित हुए, यहाँ से गुरु जी पूर्व दक्षिण के लिए रवाना हुए। गुरु जी उस सड़क (जी टीद्ध पर गंगा नदी के किनारे चले, जिसे बाद में शेर शाह सूरी ने पक्का किया था। यह सड़क मुर्शदाबाद (मकसूदाबाददद्ध से गुजरती हुई सुनारगाँव पहुँचती है। थोड़ी देर के लिए गुरु साहिब मुर्शिदाबाद में रुके, सुजा को जागृति प्रदान की और वह पुकार उठा।

सतिगुर नानक परसिया सभ पाप मिटाए। नाम अमोलक पाइया कारज भए रासे।

सुजे भगत की संगत मुर्शदाबाद में आज भी प्रचलित है। गुरु साहिब सुनारगाँव नहीं गए बल्कि दक्षिण की ओर चलकर ढाका पहुँचे। यहाँ देवी ढकेश्वरी देवी का मंदिर है, जिसके नाम पर शहर का नाम ढाका पड़ा। गुरु साहिब के समय, ढाका केवल देवी के अपने मंदिर के लिए प्रसिद्ध था और 1608 ईस्वी के बाद यह इस

क्षेत्र की राजधानी बन गया। ढाका बोही गंगा के तट पर था, और प्राचीन काल में बोही गंगा पप्रा की एक विशेष सहायक नदी थी। गुरु नानक साहिब ढाका में उतरे, जिसे अब रेयर बाजार कहा जाता है। वहाँ कुम्हारों के घर तब भी थे और आज भी। गुरु नानक के वहाँ जाने की परंपरा वहाँ के लोगों के बीच आज भी प्रचलित है। गुरु नानक साहिब के समय से एक कुआं भी है और कहा जाता है कि गुरु नानक साहिब ने अपनी छड़ी से जमीन खोदी और कुआं

खोदा। (जी. बी. सिंह-पंजाब पास्ट एंड प्रेजेंट, 1967, पृष्ठ 75द्ध

ढाका को ‘52 बाजार और 53 गलियाँ’ के नाम से भी जाना जाता था। ढाका में, गुरु जी के भक्तफों ने 12 संगतों का गठन किया, ये संगत इतनी व्यापक थीं कि आज का ढाका विश्वविद्यालय और अन्य मंदिरों का निर्माण इनसे जमीन खरीदकर किया गया। भैरव, कामाख्या और कब्र की पूजा से हटा कर परमेश्वर की भक्तिफ से जोड़ा। नाथे शाह की धर्मशाला के तीन अन्य गुरुद्वारे भी प्रसिद्ध हैं। आज यहाँ गुरु नानक शाही गुरुद्वारा सुशोभित है।

ढाका से गुरु साहिब कामरूप के लिए रवाना हुए। आज के गोलपाड़ा, कामरूप-रंगपुर और कच्छ बिहार के जिले कामरूप में गिने जाते थे। गुरु जी सबसे पहले ब्रह्मपुत्र नदी में नाव से धुबरी पहुँचे जो वर्तमान गोलपाड़ा जिले

का एक विशेष नगर है। इस स्थान पर गुरु तेगबहादुर साहिब ने मुस्लिम सैनिकों द्वारा खोदे गए टीले को बनवाया था। धुबरी से गुरु साहिब ब्रह्मपुत्र होते हुए गुवाहाटी पहुँचे, जिनका पुराना नाम प्रयाग ज्योतिष्पुर था।

सोलहवीं शताब्दी में, कामरूप के लोग तंत्र विद्या में पारंगत थे। भले ही मुसलमानों ने एक बार देवी कामाख्या के मंदिर को ध्वस्त कर दिया था, लेकिन उनकी आस्था में कोई अंतर नहीं था। कोच्चि जनजाति के लोग कामाख्या देवी की पूजा करते थे और देवी कामरूप को मानव बलि दी। गुरु साहिब गए और कामरूप के बाहर बैठ गए और मरदाने को अपनी भूख मिटाने के लिए कुछ लाने के लिए शहर भेजा। जब मरदाना किसी घर के सामने खड़ा हुआ, तो कुछ औरतें उसे घर के अंदर ले गई और तांत्रिक शिक्षा की सहायता से उनकी सोचने और बोलने की क्षमता समाप्त हो गई और उसे अपने पीछे की ओर चलने वाला मेमने बना लिया। विलायत वाली जन्मसाखी में यहाँ की रानी का नाम नूरशाह लिखा गया है लेकिन इस नाम की पुष्टि किसी अन्य जन्मसाखी या स्रोत से नहीं होती है।32 गुरु साहिब ने मरदाना की कुछ देर प्रतीक्षा की और पिफर उसकी तलाश में शहर चले गए, तो उन स्त्रियों ने उनका भी वही हाल बनाने की कोशिश की जो मरदाने की की थी। परन्तु उनकी एक न चली और वे गुरु नानकदेव जी के चरणों में गिर कर क्षमा मांगने लगी। गुरु साहिब ने उनकी गलती को क्षमा करते हुए मरदाने को पहले वाले रूप में लाकर मरदाने से कहा रबाब बजा और यह शब्द

गायाः

गुनवंती सहु राविया निर्गुण कूके काहे।

जे गुनवंती थी रहे तां भी सहु रावन जाई.33

इन महिलाओं ने सोचा कि शायद यह फकीर गीत सुनने में रुचि रखेगा और हमारे नृत्य प्रदर्शन से खुश होगा, लेकिन वे अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुए और गुरु साहिब ने वचन कहा।

ताल मदीरे घट के घाट।

ढोलक दुनिया वझी वाज।34

इन महिलाओं ने सांसारिक पदार्थों की मदद से पिफर से गुरु जी को प्रसन्न करने की कोशिश की लेकिन उसका भी गुरुजी पर कोई प्रभाव नहीं देखा और उनके चरणों में आ गईं और गुरु जी उन्हें नाम जप करने की शिक्षा दे कर आगे निकल गए। प्राचार्य सतबीर सिंह जी बताते हैं कि आज गुरुद्वारा बरछा साहिब है। 'विचों मार कढियाँ

बुरियाइआं' का यह प्रत्यक्ष प्रमाण कहा जाता है।

बसते रहो, उजड़ जाओ:

सोलहवीं शताब्दी में, कामरूप की सीमा बरना नदी के पास समाप्त हो जाती थी और वर्तमान जिला दरंग से असम (आसा देशद्ध का क्षेत्र शुरू होता था। कामरूप पर उस समय कोच्चि और असम में अहोम राजाओं का शासन था। गुरुजी कामरूप से ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे पूर्व की ओर चल दिए और रास्ते में कई स्थानों पर रुके। जब गुरु साहिब किसी शहर में गए तो वहाँ के लोग उनका मजाक उड़ाने लगे। गुरु ने कहा, फ्बसे रहोय्। अगले गाँव के

लोगों ने बहुत बड़ी सेवा की, पिफर गुरु जी उन्हें 'ऊजड़ जाओ' कहकर आगे बढ़े, तब मरदाने ने इस बात का रहस्य पूछा तो गुरु साहिब ने कहा कि इस शहर के लोग जहाँ भी जाएंगे, वहाँ के लोगों को अपने जैसा बना लेगें और पहले शहर वाले भी अपने जैसा बना लेंगे, इसलिये उन्हें 'बसे रहो' कहा गया है।

धनसारी वादीः

गुरु नानक देव जी ब्रहमपुत्र दरिया, गोलाघाट के शहर पहुँचे।

यह नगर धनसारी नदी के पूर्वी तट पर असम के वर्तमान पूर्वी भाग में सिब सागर जिले की एक तहसील है। गोलाघाट से लगी नदी की

घाटी को धनसारी वादी कहा जाता था क्योंकि यह धनसारी नदी के किनारे एक मैदानी इलाका था। धनसारी नदी नागा पर्वत से निकलती है और वर्तमान सिब सागर जिले की सीमा को नौगंग जिले से अलग करती हुई उत्तर-पश्चिम की तरफ होकर ब्रहमपुत्र नदी में विलीन हो जाती है। साथ वर्तमान पार करते हुए बहुत अधिक है। धनसारी घाटी के उत्तर में नागा और शकिर पहाड़ियों से घिरे विस्तृत मैदान थे। उन पहाड़ों पर नागाओं का निवास था जिन्होंने मनुष्यों की बलि देते और मानव मांस खाया करते थे।35

जब गुरु साहिब धनसारी घाटी गए, तो एक दिन गुरु नानक साहिब और भाई मरदाने को नागाओं ने पकड़ लिया। उन्होंने देखा कि बाबा जी और मरदाना दुनिया से अलग होकर कीर्तन में लगे हुए हैं। जब उन्होंने उन्हें मारना शुरू किया, तो वे गुरु की दिव्य महिमा और आध्यात्मिक शत्तिफ से प्रभावित हुए। उन्होंने महसूस किया कि

यह इंसान आम इंसानों की तरह नहीं है। दिव्य वचन से प्रभावित होकर, उन्होंने गुरु जी और मरदाने को छोड़ दिया। गुरु साहिब उन्हें नाम का उपदेश देकर लौट गए। डाॅ.तरलोचन सिंह लिखते हैं कि मरदाने को कौड़ा राक्षस ने पकड़ लिया था और एक पेड़ से बांध दिया था और भुनकर खाने वाला था तभी वहाँ गुरु नानक जी पहुँच गए। गुरु ने उन्हें उपदेश दिया कि आपको इंसानों को नहीं मारना चाहिए जबकि प्रकृति ने आपको खाने के लिए और भी बहुत कुछ दिया है। कोडे ने महसूस किया कि यह एक गंभीर पाप था। उन्होंने बाबा नानक से वादा किया कि वह पिफर कभी नरभक्षी नहीं बनेंगे।

'डाॅ. मोहम्मद काजिमः असम का एक विवरणः एशियाई अनुसंधान' का हवाला देते हुए। 118. तरलोचन सिंह जी गुरु बाबा के प्रभाव के बारे में लिखते हैं कि फ्इस क्षेत्र में एक पर्वत श्रृंखला है, जिसके लोग खुद को 'नानक कबीला' कहते हैं, वे बहुत स्वतंत्र स्वभाव के हैं। वे राजा को कर नहीं देते और उसके अधिकांश आदेशों का

पालन करते हैं। हो सकता है कि गुरु नानक देव जी को कौड़ा इन पहाड़ियों पर मिले हों और उनके अनुयायी बाबा नानक के अनुयायी बन गए हों। गुरु नानक से मिलने के तुरंत बाद कौड़ा की मृत्यु हो गई थी।36

गुरु साहिब गोलाघाट से वापस गुवाहाटी ब्रहमपुत्र नदी के रास्ते होते हुए पहुँचे और गुवाहाटी से एक पहाड़ी रास्ता मौजूदा शिलांग की तरफ जाता हैं। इस से आगे जोवाई से होकर, जयंती पूरे पहाड़ी रास्ते पर जहाँ केवल घोड़े और पुरुष ही चल सकते थेऋ सिलहट पहुँच गए। जयंती पुरा वर्तमान शिलांग से जोवाई तक 64 मील और जयंती पुरा से सिलहट 26 मील दूर था। ऐसा कहा जाता है कि पहले सिलहट में गुरु नानक की याद में एक गुरुद्वारा था।

यह तारा सिंह निरोतम के फ्गुरु तीरथ संग्रहय् से स्पष्ट होता है। लेकिन लगता है कि यह गुरुद्वारा समय के साथ ढह गया क्योंकि आजकल यहाँ कोई गुरुद्वारा नहीं है।

सिलहट ब्रह्मपुत्र घाटी के दक्षिण की ओर सूरमा या बराक नदियों की घाटी में के बीच होने के कारण पूर्वी बंगाल के ज्यादा करीब था। 16वीं शताब्दी की शुरुआत में सिलहट पर मुसलमानों का कब्जा था। यहाँ एक पहुँचा हुआ फकीर शाह जलाल यहाँ रहता था और जिसका देहांत 1531 ईस्वी में हुआ। उनकी मस्जिद और मकबरा आज भी उनके खास स्मारक माने जाते हैं। हो सकता है शाह जलाल का गुरु जी से मेल हुआ हो।

सिलहट से वर्तमान कलकत्ता तक जाने वाले कई मार्ग थे। लेकिन सिलहट इलाके में आमतौर पर लोग नाव से ही सफर करते थे। तो गुरु साहिब सिलहट से पूर्व में सूरमा नदी तक और पिफर बराक नदी में ढाका के दक्षिण-पश्चिम में कई जगहों पर नाव से और कई जगहों पर पैदल चलकर उस सड़क तक पहुँचे जो वर्तमान कलकत्ता से गंजाम जाती थी। गंजाम उड़ीसा और दक्षिण का एक नगर था। इसी रास्ते से चलते हुए गुरु जी वह उड़ीसा की तत्कालीन राजधानी कटक पहुँचे।

उड़ीसा का सबसे प्रसिद्ध मंदिर जगन्नाथ था। इसलिए, उड़ीसा के राजा को राजा जगन्नाथ के रूप में सम्मानित किया जाता था। जब गुरु साहिब कटक पहुँचे, तो प्रतापरुद्र देव उड़ीसा के राजा थे। जो अपने पिता पुरुषोत्तमदेव की मृत्यु के बाद 1497 में गद्दी पर बैठा। प्रतापरुद्रदेव वैष्णव मत का अनुयायी था। जब उन्हें पता चला

कि उत्तर-पश्चिमी भारत से कोई महापुरुष आए हैं, और उनके साथ

एक रबाबी भी है। वह अपने घोड़े पर सवार होकर गुरु जी को मिलने आया। जो लोग गुरु के बगल में बैठे थे वे राजा को देखकर दूर चले गए और राजा ने दर्शन किए और प्रसन्न होकर गुरु जी से प्रश्न पूछा कि यह दुनिया क्या है, कुछ पता नहीं लगता कि कोई जीव किस तरह का है और कोई दूसरा किस तरफ का? बहुत सारे संत और कई चोर हैं। हम उनकी रचना से भगवान के रूप को कैसे समझें ? जवाब में, गुरु ने यह शब्द गाया।

एको सरवर कमल अनूप।। सदा बिगसे परमल रूप।। ऊजल मोती चुगहि हंस।। सर्ब कला जगदीसे अंस।।37

जब राजा ने इन शब्दों को सुना, तो वार्तालाप हुई, वह बहुत प्रभावित हुआ और अभिवादन करके सम्मानित किया और चला

गया। कटक, गुरु नानक की याद में एक प्राचीन गुरुद्वारा है। (यह साखीद्ध मेहरवान वाली जनमसाखी और गुरु नानक चमत्कार-भाई वीर सिंह से ली गई है।

जगन्नाथ पुरीः

कटक से पुरी तक की पुरानी सड़क को जगन्नाथ रोड भी कहा जाता था। गुरु ने कटक से इस सड़क पर प्रस्थान किया। इसी रास्ते पर उनकी मुलाकात पंडित कलजुग से हुई थी। जब उन्हें पता चला कि राजा ने गुरु जी का सम्मान किया है, तो वे गुरु को जीतने के लिए अपने तांत्रिक ज्ञान, धन और शत्तिफ के साथ पुरी से इस पुराने

रास्ते पर आ गया। उसने पहले गुरु जी को डराने की कोशिश की। कई भयानक रूप थे, लेकिन गुरु अडिग रहे। जब उसकी एक न चली तो वह गुरु के पास आकर अपने धन का लालच देने लगा, और मोतियों के मंदिर और सुंदर महिलाओं के वादे से उन्हें बहकाने लगे। लेकिन गुरु अडिग रहे और मरदाने से कहा, रबाब बजाओ। उन्होंने इन शब्दों को गाया।

मोती त मंदर उसरही रतनी त होई जडाऊ। कस्तूरी कंगू अगरि चन्दनि लीपी आवे चाऊ। मत देख भूला वीसरै तेरा चिति न आवे नाऊ। हरी बिन जीऊ जलि बलि जाऊ।38

यह सुनकर कलजुग गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और गुरु जी उनसे बात करते हुए जगन्नाथ पुरी पहुँच गए।

पश्चिमी विद्वानों का मानना है कि यह एक बौद्धस्थल था और मध्ययुग में उड़ीसा के गंगा और सूरजवंश के राजाओं की मदद से इसने विष्णु के मंदिर का रूप ले लिया। कई लेखकों का मत है कि गुरुनानक यहाँ चेतनिया भगत से मिले थे और कुछ समय तक दोनों

एकसाथ कीर्तन करते रहे। समुद्र की लहरों, लहरदार हवा, आकाश में तारे और चंद्रमा के साथ गुरु नानक को पुरी का स्थान बहुत ही सुखद और प्यारा लगा। उन्हें ऐसा लग रहा था कि ये सभी दृश्य उस अकाल पुरख की आरती कर रहे हैं। एक दिन पंडों ने पूछा कि आप आरती के लिए खड़े क्यों नहीं हुए तो उन्होंने कहा कि सभी प्रकृति, तारे, चंद्रमा और सूर्य सभी उस परमात्मा की आरती कर रहे हैं। तो पंडड्ढा ने कहा कि आप जिस आरती की बात कर रहे हैं, वो आरती भी बता दें। तब गुरु जी ने यह आरती सुनायी।

गगन में थालु रवि चंदू दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती। धूप मलआनलो पवण चवरो करे सगल बनराय फूलंत जोति। कैसी आरती होए भव खंडना तेरी आरती।

अनहता शब्द वाजंत भेरी।39

इस आरती को सुनकर पांडे बहुत प्रभावित हुए। यहाँ गुरु जी की याद में एक पुराना गुरुद्वारा है, जिसे बौउली साहिब कहा जाता है। यहाँ पुरी में, प्रतापरुद्र देव एक बार पिफर गुरु जी से मिलने आए और पूछा कि आपको यह नाम का उपहार कैसे मिला? गुरु ने इन शब्दों को गाया।

निधि सिद्धि निरमल नाम बीचार। पूरण पुरि रहिया बिखु मारि।। त्रिकुटी छुटी बिमल माझारी। गुर की मति जिए आई कारि।।40 राजा ने इन वचनों को सुना और प्रणाम किया और गुरु साहिब

यहाँ कुछ देर रुके और पिफर दक्षिण की ओर चल दिए।

गुंटूरः

जगन्नाथ पुरी से गुरु साहिब और मरदाना दक्षिण की ओर मुड़ गए। आप पुरी से कटक और कटक से गंजम आ गए। बंगाल से गंजाम तक एक पुरानी सड़क आती थी। गंजाम से आप दक्षिण की तरफ कांचीपुरम या मौजूदा कांजीवरम वाली सड़क पर चलते चलते उस स्थान पर पहुँचे जिसे आजकल गंटूर कहते हैं। यह आंध्र प्रदेश का एक

प्रमुख शहर है। डा॔.कृपाल सिंह के अनुसार, यह नगर मसूलीपट्टम से 60 मील पश्चिम में और निकटवर्ती पहाड़ी से 6 मील पूर्व में है। यहाँ गुरु नानक देव जी की स्मृति में एक गुरुद्वारा भी है, जो उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हैदराबाद के एक वजीर चंदू लाल ने बनवाया था। उस ने दक्षिण की ओर गुरु साहिब जी के चरण छोह प्राप्त करने वाले पाँच स्थानों पर उस ने गुरुद्वारे बनवाए थे। गुंटूर उनमें से एक था। इसकी सेवा उदासी साधु करते रहे हैं। कुछ समय यहाँ रहने के बाद गुरु जी ने प्रकृति के स्वरूप का आनंद लिया और पिफर दक्षिण की ओर चल पड़े।

कांचीपुरमः

गुंटूर से गुरु नानक साहिब मद्रास के दक्षिण में कांचीपुरम पहुँच गए। आज कल यह मद्रास से 45 मील दक्षिण पश्चिम में स्थित है। कांचीपुरम भारत के प्रसिद्ध तीर्थों में से एक है। यहाँ जैन मत के लोग बड़ी संख्या में रहते हैं। यह शहर पाल और चोल राजाओं की राजधानी रहा है। गुरु नानक साहिब के समकालीन राजा कृष्ण ने

यहाँ (1502द्ध दो मंदिरों का निर्माण कराया। गुरु नानकदेव जी की

याद में एक गुरुद्वारे है।

तिरुवनंतपुरमः

काचीपुरम से दक्षिण की ओर चलकर गुरु जी त्रिवणमलाई नगर पहुँचे। यह शहर अब दक्षिण अर्काट जिले में है। सोलहवीं शताब्दी में, यह दक्षिण में मुख्य सड़क और पश्चिम में पहाड़ी सड़कों पर था। आजकल चारों तरफ सड़कें हैं। त्रिवणमलाई का अर्थ है फ्पहाड़ों में प्रज्ज्वलित पवित्र अग्नि।य् कहा जाता है कि एक बार पार्वती ने शिव की आंखों पर हाथ रखा और पूरी दुनिया में अंधेरा छा गया। शिव पार्वती से बहुत क्रोधित हो गए और उन्हें दुनिया में भेज दिया। त्रिवणमलाई उन स्थानों में से एक था जहाँ उन्होंने तपस्या की थी। कुछ समय तक पार्वती ने यहाँ तपस्या की और पिफर शिव ने बगल की पहाड़ी पर एक ज्योति जलाई और पार्वती को संकेत दिया कि उनकी गलती क्षमा हो गई है। इस प्रकार प्रज्ज्वलित अग्नि जो पहाड़ी पर दिखाई दी,उसी के नाम पर त्रिवेंद्रम शहर, पहाड़ी की तलहटी में बस गया। यह एक बहुत पुराना शहर है और यहाँ शिव का एक सुंदर मंदिर है जो बहुत पुराना है, गुरु साहिब यहाँ कुछ समय के लिए रुके थे, और उनकी याद में एक गुरुद्वारा है। यह गुरुद्वारा भी चंदू लाल वजीर हैदराबाद द्वारा निर्मित गुरुद्वारों में से एक है। गुरु यहाँ कुछ देर रुके और पिफर दक्षिण की ओर चल पड़े।

लंका:

त्रिवेंद्रम से, गुरु नानक और मरदाना ने दक्षिण की ओर त्रिचनापल्ली की ओर प्रस्थान किया। त्रिचनापल्ली के पास तमिल

के आलवार वैष्णव संतों का सबसे प्रसिद्ध मंदिर श्री रंगम था। यह मंदिर कावेरी और कोलरौन नदियों के बीच स्थित है। श्री रंगम का अर्थ तमिल में दो नदियों के बीच स्थित होना भी है। दक्षिण भारत में वैष्णवों का यह सबसे बड़ा मंदिर था। यहीं पर भक्तिफ संप्रदाय के नेता रामानुज ने अपने जीवन के अंतिम वर्ष बिताए थे। इस मंदिर की सात परिक्रमाएँ हैं। गुरु साहिब कुछ समय के लिए यहाँ ठहरे थे और यहाँ एक गुरुद्वारा चंदू लाल ने बनवाया, पर यह आजकल दिखायी नहीं देता।

त्रिचनापाली से गुरु साहिब नाव से नागापट्टिठनम पहुँचे। यह लंका जाने के लिए दक्षिण भारत के सबसे पुराने बंदरगाहों में से एक था। यहीं से गुरु साहिब लंका गए। गुरु नानक साहिब नागापट्टिठनम से त्रिंकोमली और पिफर मटियाकुलम (नई बटिकुलाद्ध आए।

बटिकुला के राजा शिव के उपासक थे। जनम साखियों में इसका नाम शिवनाभ लिखा है। इसका मतलब है कि वह शिव के उपासक थे। उन्होंने मनसुख से गुरु नानक साहिब की स्तुति सुनी थी। मनसुख ने भगीरथ के साथ सुल्तानपुर में गुरु से मुलाकात की थी।

यहाँ वह कारोबार के सिलसिले में आया था और उसने राजा को गुरु नानक साहिब की महिमा बताई थी। जब राजा को पता चला कि

एक साधु उत्तर भारत से आया है, तो उसने सुंदर महिलाओं को परीक्षा के लिए भेजा। उन्होंने कई रंग दिखाए लेकिन बाबा को मोह नहीं पायी। गुरु साहिब अपने ध्यान में मग्न रहे।

तब इस राजा ने स्वयं आकर पूछा कि तुम कौन हो? आप जोगी हैं या पंडित? तब गुरु ने यह शब्द पढ़ा।

जोगी जुगति नाम निरमाइल ता के मैल न राती। प्रीतम नाथ सदा सच संगे जनम मरण गति बित।41

यह सुनकर राजा समझ गया कि जिस महापुरुष के विषय में मनसुख ने बताया था, वे ये ही हैं। राजा ने गुरु जी का अभिवादन किया और उन्हें अपने साथ महल में ले गया। कुछ समय राजा के पास रहकर, गुरु जी ने राजा से अनुमति लेकर बटिकुला से लगभग 12 मील दक्षिण में डेरे डाले। ये जगहें बहुत खूबसूरत थीं। यहीं पर गुरु जी ने ज्ञानी ज्ञान सिंह के अनुसार एक अच्छे भाट को सिख बनाया। जिस स्थान पर गुरु जी ठहरे थे, उस स्थान पर कुरुकल मंडप नामक नगर है। कुरुकुल एक तमिल शब्द है जिसका अर्थ है

'गुरु का नगर'। यहाँ के लोगो ने डाॅ. कृपाल सिंह को बताया कि साढ़े चार सौ साल पहले यहाँ उत्तर भारत से एक सिद्ध बाबा यहाँ आए थे। उनकी याद में शहर बसा हुआ है।

लंका के राजा के साथ मिलन

कुरुकुल मंडप से, गुरु जी ने लंका के प्रसिद्ध तीर्थ स्थल करतारगामा की यात्र की, जो लंका के सुदूर दक्षिण पूर्व में स्थित है। भारतीय तीर्थयात्री गुरु साहिब से सदियों पहले इस स्थान पर आते थे। लंका के पूर्वी तट के बटिकुला से तीर्थयात्रियों ने करतारगामा की

यात्र की। तो गुरु जी वर्तमान कलमुनाई, तुकोइल, पाटुविल और पानम से गुजरते हुए मानक गंगा के तट पर प्रसिद्ध स्थान पर पहुँचे। ज्ञानी ज्ञान सिंह के अनुसार, गुरु साहिब करतरगामा या कार्तिक स्वामी के मंदिर से, बादुला नामक शहर में चले गए। वहाँ से वे नूरा अहिलिया के पहाड़ी इलाकों से गुजरे, जिन्हें सीता अहिलिया भी

कहा जाता है, और सीता वाका के माध्यम से कोटि राज पहुँचे। उस समय कोटि के नौवें राजा धर्म-प्रकर्मा बाहू शासन कर रहे थे। वह राजा गुरु जी के साथ चर्चा परिचर्चा से बहुत प्रभावित हुए।

कोटिराज में बौद्ध धर्म बहुत मजबूत था जो एक अनीश्वरवादी धर्म है। लेकिन गुरु नानक देव जी तो भगवान को अंग-संग मानते थे। गुरु जी ने उन्हें ईश्वरवाद का उपदेश दिया। जिससे राजा बहुत प्रभावित हुए। बौद्ध धर्म में, संघ-राजा बोद्धियों की सर्वाेच्च स्थानीय उपाधि थी। जब उन्हें पता चला कि गुरु जी ने राजा को अपना अनुयायी बना लिया है, तो उन्होंने गुरु जी से चर्चा करने की कोशिश की। चूँकि गुरु का उपदेश मूर्तिपूजा और जाति के विरुद्ध था, इसलिए कुछ ब्राह्मण भी बौद्धों में शामिल हो गए। जब वे सभी कोटि के राजा के सामने चर्चा करने लगे, तो गुरु ने समझाया कि भगवान का नाम ही सभी को शांति देता है। गुरु ने यह शब्द गया:-

सतयुग सत सत बोलो। पोनाहारी मन नहीं डोले।

त्रोते जग भगत कमाई। जप तप संजम ताड़ी लायी।

द्वापर भागता पुन्न सतजुग त्रोता जुगा दुवापर पूजा चारे। कलजुग कीर्तन नाम आधारा।

तीने जग तीने दृढे कलि केवल नाम आधार।42

यह सुनकर राजा धर्म प्रकर्मा बाहू और अन्य सभी बहुत प्रभावित हुए। गुरु साहिब कुछ देर कोटि रुके और पिफर उत्तर की ओर चल पड़े।

उत्तर की ओर चलते हुए, गुरु साहिब सीतावाका पहुँचे, जिसे अब अविस्वेला कहा जाता है। यह कोलंबो से 33 मील उत्तर पूर्व में है। सीतावाका से गुरु साहिब अनराधपुरा पहुँचे। यह प्राचीन काल से श्रीलंका की राजधानी रही है। पिफर उत्तर में तालीमीनार बंदरगाह है। पास ही पहिला मैनर का बंदरगाह था। इब्न बतूता भी यहाँ आया और वहाँ के मुसलमानों से मिला था। इस क्षेत्र में पानी की भारी कमी थी, और तालाबों में बारिश के पानी को भर कर पूरे साल भर इस्तेमाल किया जाता था। गाँव की आबादी भी तालाब के पास ही थी। इस क्षेत्र में चलते चलते भाई मरदाने को बहुत प्यास लगी। गुरु जी ने एक तलाब मरदाने को पानी पिलाया और खुद भी पिया। वह पड़ोस की बस्ती से कुछ खाना भी लाया और गुरु और मरदाने दोनों ने खाया। इस प्रकार गुरु ने मरदाने की भूख और प्यास बुझाई.

सेतुबंध-रामेश्वरम:

लंका में गुरु साहिब और भाई मरदाना बादबानी जहाज में सवार होकर सेतुबंध पहुँचे। यह स्थान रामेश्वरम से 8-9 मील की दूरी पर है। कहा जाता है कि श्री राम जी ने लंका पर विजय प्राप्त करने के बाद यहाँ एक पुल का निर्माण किया था। गुरु साहिब सेतबंध से रामेश्वरम आए। गुरुद्वारा नानक उदासी मठ यहाँ गुरु साहिब के आगमन की स्मृति में है। रामेश्वरम का मंदिर पामबन द्वीप के उत्तर पूर्व की ओर है। इसका आंतरिक भाग काले पत्थर से बना है जो लंका से लाया गया था। फग्र्यूसन के अनुसार रामेश्वरम का मंदिर उतना बड़ा नहीं था जितना अब है। इसका अधिकांश भाग सोलहवीं से सत्राहवीं शताब्दी में बनाया गया था। गुरु साहिब ने रामेश्वरम के पास गोरख पंथी जोगिया से चर्चा की।

जब आप मंदिर जा रहे थे तो किसी ने कहा कि आप निरंकार

के भक्तफ हैं और यहाँ क्यों जाते हैं। गुरु ने शब्द कहेः

दूजी माया जगत चित वासु। काम, क्रोध और अहंकार

बिनास।

दूजा काऊन कहा नहीं कोई। सभ महि एक निरंजन सोई.43

यह सुनकर जोगी चुप हो गए और गुरु साहिब कुछ देर के लिए रामेश्वरम ठहर कर उत्तर की ओर चल दिए। रामेश्वरम से गुरु साहिब और मरदाना रामनादपुरम और त्रिवनमलाये से होते हुए वर्तमान त्रिवेंद्रम पहुँचे। उस समय त्रिवेंद्रम समुद्र से थोड़ी दूरी पर था और तिरुअनंतपुरम के नाम से प्रसिद्ध नगर था। यहाँ श्री अनंता पद्यनाभा स्वामी का एक पुराना मंदिर था। तिरुअनंतपुरम के नाम से, धीरे-धीरे इसका नाम त्रिवेंद्रम पड़ गया। त्रिवेंद्रम के पास, उत्तर पश्चिम में, दो छोटे शहर, पालम और कोट्टðायम थे। यहाँ गुरु नानक साहिब आकर बैठे थे। यहाँ जोगियों का डेरा था, इस पर चर्चा करते हुए गुरु साहिब ने जोगियों को बांट कर खाने का निर्देश दिया। जोगिया ने आपको एक तिल दिया और कहा, फ्इसे बांटकर दिखाओ।य् गुरु साहिब ने मरदाने से कुड़ी में कूटकर और पानी मिलाने को कहा और सब को बांट दिया। इस जगह को तिलगंजी साहिब कहा जाता है। यहाँ एक गुरुद्वारा है और उदासी संत सेवा करते हैं।

कौड़ा राक्षस से मिलनः

पालम कोट्टðायम से गुरु ने उत्तर की ओर वर्तमान कोयम्बतूर जिले के दक्षिण में अन्नामलाई पहाड़ियों के पास आ गये, यह पर्वत पश्चिमी घाट के पहाड़ों का हिस्सा थे। इन्हें हाथी पर्वत भी कहा जाता है। इन पहाड़ों की ढलानों पर कादन नाम के जंगली लोग सदियों से बसे हुए हैं। ये लोग पहाड़ों की घाटियों में रहते थे और जंगली उपज पर रहते थे। बाकी जंगली जनजातियों की तरह, वे बाहरी व्यत्तिफ को मार डालते थे। इन कादान जंगली लोगों के लिए ही ऐसा लगता है कि कौड़ा लिखा गया है। जब गुरु अन्नामलाई पर्वत पर आए, तो एक कादीन ने मरदाने को पकड़ लिया और उसे मारने लगे। उसी समय गुरु जी वहाँ पहुँच गए। गुरु के मुख से तेज टपकता देख कादान चकित रह गया। गुरु जी ने मरदाने को रिहा कर करवाया और उसे अपने साथ ले कर उत्तर की ओर चल दिए। कहा जाता है कि यह कादान भी गुरु का शिष्य बन गया।

बीदरः

गुरु नानक मालाबार के नीलगिरि पर्वत से होते हुए बीदर नगर पहुँचे। यहाँ कभी बांस का जंगल हुआ करता था। जंगल काट दिया गया और वारंगल काकतीय राजाओं ने महादेव का मंदिर बनवाया। इसके चारों ओर बसे हुए नगर का नाम बीदर था। बीदर बहमनी साम्राज्य की राजधानी भी थी। बहमनी राजाओं के मकबरे बीदर के उत्तर, पूर्व और पश्चिम दिशा में मिलते थे। गुरु नानक साहिब बीदर के इस जंगल में रहे। इस क्षेत्र में दो मुस्लिम फकीर जलाउद्दीन और सैयद याकूब अली रहते थे। जब उन्हें गुरु साहिब के बारे में पता चला तो वे गुरु जी के दर्शन करने आए। गुरु जी कुछ समय यह रहे और यह शब्द उच्चरित किया:

मुसलमाना सिफति शरियत पढ़ी पढ़ी करहि बीचार।

बंदे से जि पवहि विचि बंदी वेखन कऊ दीदार।44

जलालुद्दीन और याकूबली दोनों की कब्रें अभी भी मौजूद हैं। इन कब्रों के पास मीठे पानी का एक चश्मा बहता है, जो गुरु नानक के समय की याद दिलाता है। इसे नानक झीरा कहा जाता है। यह शहर पहले हैदराबाद राज्य में था और अब कर्नाटक राज्य में है।

नांदेड़ः

नांदेड़ शहर बीदर से 117 मील उत्तर में था। गुरु साहिब नांदेड़ पहुँचे और शहर से तीन मील बाहर बैठ गए। जहाँ आजकल गुरुद्वारा माल टिकरी है। यहाँ एक फकीर सयत शाह हुसैन रहता था। गुरु जी कुछ देर उसके साथ रहे और पिफर उत्तर की ओर चले गए। उस फकीर शाह हुसैन का लकड़ी का मकबरा गुरुद्वारे के पीछे बना है।

नर्मदा नदी के किनारे:

नांदेड़ से चलकर, गुरु साहिब देवगिरि जिसे आज दोलाताबाद कहते हैं यहाँ से होते हुए नर्मदा के किनारे पर पहुँचे जहाँ नर्मदा अरब सागर में मिलती है। इस शहर का नाम बरोच नगर था। जो अब रेलवे स्टेशन बरोच के पास है यहाँ गुरु जी को एक संन्यासी मिला, और उसने गुरु जी से पूछा कि जो मन ईश्वर से दूर है वह परमेश्वर को कैसे प्राप्त कर सकता है। गुरु साहिब ने वचन कहाः-

ना मन मरे ना कारज होई. मन वसि दूता दुरमति दोई। मन मानें गुर ते इक होई.45

यह वचन सुनकर तपस्वी ने गुरु का अभिवादन किया। गुरु साहिब कुछ समय के लिए यहाँ ठहरे। नानकवाडी गुरु नानक साहिब के सबसे पुराने स्मारकों में से एक है। 18वीं शताब्दी में, जब अंग्रेजों ने इस क्षेत्र का बंदोबस्त किया, तो उन्होंने गुरुद्वारे का नाम 75 रुपये प्रति वर्ष की जागीर शुरू की, जो आज भी जारी है। कुछ देर यहाँ रहने के बाद गुरु आगे बढ़े।

गिरनार पर्वत (सोरठि देशद्धः

गुरु नानक साहिब बरोच से एक नाव पर सवार हुए और मौजूदा वैरावल बंदरगाह के पास तत्कालीन बंदरगाह प्रभास के पास पहुँचे। प्रभास बंदरगाह के पास सोमनाथ का एक मंदिर भी था। आप सोमनाथ मंदिर से 50 मील दूर गिरनार पर्वत पर पहुँचे। गिरनार पर्वत जूनागढ़ से 10 मील दूर है। जूनागढ़ क्षेत्र का पुराना नाम सोरठ था। सौराष्ट्र सोरठ का दूसरा नाम था। जिस समय गुरु नानकदेव जी सोरठ देश गए उस समय सोरठ पर मुजफ्फर द्वितीय (1511 से 1526 ईस्वीद्ध का शासन था।

गुरु नानक देव जी ने मरदाने को रबाब और सोरठ राग गाने के लिए कहा और उन्होंने ये शब्द गाएः-

सोरठि सदा सुहावणी जे सचा मनि होई. दंदी मैल न कतु मनि जीभै सचा सोई.46

;जूनागढ़द्ध गिरनार पर्वतः

गुरु नानक साहिब के समय जूनागढ़ के पास गिरनार पहाड़ी गोरख पंथ जोगियों के लिए एक प्रसिद्ध स्थान था। जोगी परंपरा के अनुसार, गुरु दत्तात्रोय मच्छेन्द्रनाथ के गुरु थे। उन्होंने मच्छेन्द्रनाथ को

दीक्षा दी मच्छेन्द्रनाथ ने गोरख नाथ को। दत्तात्रोय का स्थान गिरनार पर्वत की एक ऊँची चोटी पर था। गिरनार पर्वत की पाँच चोटियाँ थीं जिनके वर्तमान नाम हैंः अम्बा माता, गोरख नाथ, उग्र शिखर, गुरु दत्तात्रोय और कालका जी। इन चोटियों के रास्ते में जैन मंदिर भी आते थे। अम्बा माता का मंदिर वास्तव में जैनियों का मंदिर है। इस पर्वत पर सभी मतों और संप्रदायों के संत रहते थे। आज गिरनार पर्वत पर तीन कुण्ड हैं। गोरख मुखी कुंड, हनुमान धारा और कमण्डल कुंड। जब गुरु नानकदेव जी गिरनार पर्वत पर गए, तो सिद्धों ने गुरु नानक से पानी मांगा। तब गुरु नानकदेव जी ने कमण्डल उठा कर फेंका, और वहन कमण्डल कुण्ड बन गया। लेकिन जूना गढ़ में आजकल गुरु नानक देव जी का कोई स्मारक नहीं है। नानक संप्रदाय का मत है, कि, जहाँ आजकल देवी दुर्गा का मंदिर है, वहाँ नानक शाही गुरुद्वारा हुआ करता था, जहाँ सुथरे शाही संत रहते थे और जो यह स्थान एक गृहस्थ को बेच कर चले गए। गुरु जी कुछ समय के लिए गिरनार में रहे और पिफर उत्तर की ओर चल पड़े।

उज्जैन:

जूनागढ़ से गुरु जी और भाई मरदाना ने पहले उत्तर और पिफर पूर्व की यात्र की और अहमदाबाद होते हुए उज्जैन पहुँचे। पश्चिमी तट से व्यापारी अहमदाबाद और उज्जैन आते जाते रहते थे, क्योंकि दोनों बड़े व्यापारिक केंद्र थे।

भर्तृहरि हरि की गुफा सपरा नदी (अवंती नदीद्ध के तट पर थी। भर्तृहरि हरि की गुफा के पास एक मुस्लिम मस्जिद भी थी, जिसके सामने एक इमली का पेड़ था। इसी पेड़ के पास गुरु साहिब ने डेरा डाला था। इस गुफा के पास एक हरा-भरा रहता था। जब उन्होंने भाई मरदाना और गुरु नानक को कीर्तन करते हुए देखा, तो वे बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने आकर गुरु जी से पूछा कि यहाँ आने वाले कितने योगी मोक्ष प्राप्त करेंगे।

आध्यात्मिक करम करे ता साचा। मुत्तिफ भेदू किया जाने कच्चा।

ऐसी जोगी जुगाती बिचाराई, पंच मारी साचु उरी धारै।

जिस के अंतरि साचु वसावै, जोग जुगति की कीमति पावै।47 इन शब्दों को सुनकर भर्तृहरि के मन की अनेक शंकाएँ दूर हो

गईं और अन्य अनेक विषयों पर विचार-विमर्श हुआ। एक दिन भर्तृहरि ने पिफर पूछा। आपका ज्ञान मार्ग क्या है? आप किस स्नान को सबसे ज्यादा महत्व देते हैं? आप किसका सिमरन करते हैं? इसी तरह कई अन्य विषयों पर भी खुली चर्चा हुई और भर्तृहरि बहुत प्रभावित हुए। कुछ समय के लिए गुरु जी भर्तृहरि के साथ रहे और पिफर आगे उत्तर की ओर बढ़े।

मथुराः

उज्जैन से गुरु साहिब और भाई मरदाना चितौड़ और अजमेर होते हुए मथुरा पहुँचे। रास्ते में अजमेर के पास पुष्कर झील में गुरु नानक देव का एक पुराना गुरुद्वारा हुआ करता था। यह डाॅ. कृपाल सिंह जी का मानना हैं, लेकिन आजकल वहाँ कोई गुरुद्वारा नहीं है। विदेशियों के शासनकाल के दौरान, मथुरा को विष्णु मत का ज्ञान केंद्र माना जाता था जिसके पश्चिमी क्षेत्र को बृजभूमि कहा जाता

था, क्योंकि इसमें श्री कृष्ण जी महाराज के जन्मस्थान और उनके जीवन के अन्य पहलुओं से संबंधित कई स्मारक शामिल थे। दिल्ली से इसकी निकटता के कारण, यह विदेशी सम्राटों के प्रति पक्षपात और द्वेष का प्रतीक बना रहा। महमूद गजनवी ने सबसे पहले मथुरा के मंदिर को तोड़ा था। सम्राट सिकंदर लोधी (1488-1517द्ध ने भी मथुरा में कई मंदिरों को तोड़ा था।

गुरु नानक साहिब मथुरा में केशव देव के एक मंदिर में जाकर ठहरे। जब इस मंदिर में गुरु साहिब विराजमान थे, तो उनके पास कई भक्तफ आकर बैठ गए और बात करते हुए भक्तफों ने पूछा, फ्यदि आपने भगवान को पाया है, तो आपने उन्हें किस सेवा से पाया है?य् तो आपने इसका उत्तर दिया-

सहिज मिलै मिलिआ परवाण, ना तिस मरण ना आवण जाण। ठाकुर महि दास दस महि सोई। जह देखा तह अवर ना कोई। गुरमुखि भगति सहज घर पाईए।

बिन गुर भेटे मरि आइये जाइए।48

एक बार वैष्णव मत के लोग गुरु जी के पास आए और उनसे पूछा कि आपका पंथ कौन सा है? अनुपालन क्या है? और क्या उपदेश है? पिफर आपने यह शबद गायाः

अपने ठाकुर की हऊ चेरी।

चरनि गहे जगजीवन प्रभ के हऊमै मार निबेरी। रहाऊ पूरन परम जोति परमेसर प्रीतम प्राण हमारे।।9

उन वैष्णवों ने शब्द सुनने के बाद, गुरु साहिब को नमस्कार किया और गुरु साहिब कुछ समय के लिए मथुरा में रहे और पिफर दिल्ली के लिए रवाना हो गए।

दिल्ली में उपदेशः

मथुरा से चलकर गुरु साहिब और भाई मरदाना दिल्ली पहुँचे। दिल्ली के बाहर शाही रास्ते पर एक पेड़ के नीचे, गुरुओं ने डेरा डाला और मधुर स्वर में कीर्तन शुरू कर दिया। कीर्तन से प्रभावित होकर बगल के बगीचे के मालिक ने उन्हें बगीचे में रहने को कहा। गुरु जी मान गए, गुरु नानकदेव जी और भाई मरदाना प्रतिदिन बगीचे में कीर्तन करने लगे, और संगतें जुड़नी शुरू हो गई। गुरु साहिब ने प्यासों के लिए वहाँ एक कुआं खुदवाया ताकि हर प्यासे को पानी मिल सके। जो पैसा लोग चढाते थे उस पैसे का लंगर लगा दिया जाता था। यह व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि कोई भी यात्री भूखा-प्यासा नहीं रहता था। बगीचे के मालिक ने यह बाग गुरु नानक देव जी की धर्मशाला बना दी। इसी स्थान पर गुरुद्वारा नानक पियाउ है। डाॅ. त्रिलोचन सिंह लिखते हैं कि इसका पहला नाम पियाउ साहब था। यहाँ गुरु साहिब ने एक अभिमानी तपस्वी के अभिमान को ज्ञान-चर्चा के माध्यम से तोड़ा था।

दिल्ली में एक फकीर मजनू रहता था। गुरु जी ने इसकी मेहनत की बात सुनकर, यमुना के किनारे एक टीले परजहाँ उसकी झोपडी थी उस का दरवाजा खटखटाया। मजनू गुरु जी के दर्शन करके निहाल हो गया। उसके भीतर उस नूर की ज्वाला जग उठी जिसकी

खोज और दर्शन के लिए वह दीवाना हो गया था। उसने गुरु नानक

देव जी को अपना पीर मानकर उस निवास स्थान को गुरु नानक देव जी का स्थान बना दिया। इस जगह को मजनू का टीला कहा जाता है और यहाँ एक खूबसूरत गुरुद्वारा साहिब बनाया गया है। बाद में गुरु हर गोबिंद सिंह जी और बाबा राम राय जी इस स्थान पर ठहरे थे।

दिल्ली से कई अन्य संत-भक्तफ, सूफी फकीर गुरु के साथ यहाँ विचार-चर्चा करने के लिए आए और गुरु जी का बहुत मान-सम्मान किया। जन्मसाखियों के संदर्भ में डाॅ. कृपाल सिंह जी और प्रधानाचार्य सतबीर सिंह जी दिल्ली आने के विषय में पूर्व से दक्षिण की यात्र की वापसी से मानते हैंऋ जबकि डाॅ.त्रिलोचन सिंह पूर्व की ओर प्रस्थान करने से पहले गुरु साहिब के दिल्ली आने के बारे में लिखते हैं।

पानीपत:

गुरु नानकदेव जी और भाई मरदाना ने दिल्ली से पानीपत की ओर कूच किया, जो शेर शाह सूरी मार्ग के शहर पर स्थित है। पानीपत में एक प्रसिद्ध फकीर, बुआली कलंदर शेख शरफौद-दीन रहता था, जिसे शाह शरफ भी कहा जाता था। 1325 ई.में उनकी मृत्यु हो गई। उनका मकबरा पानीपत में था। गुरु साहिब के समय

यह दरगाह सूफी फकीरों का प्रमुख केंद्र था। शेख इदल कबीर उस समय शाह शरफ की दरगाह पर विराजमान थे। उन्हें महान कार्य करने वाला एक फकीर माना जाता था। इसके कई नाम थे और शेख ताहिर भी उनमें से एक था। अरबी में तहर का मतलब पवित्र होता है। जनम सखियों में इसे शेख तातिहार लिखा जाता है। शेख तहर और उसके अनुयायी गुरु साहिब के दर्शन करने आए और कुछ समय बाद पूछने लगे कि सफा (साफद्धदिल दरवेश कैसा होता है? और उसका व्यवहार कैसा होता है? इसके जवाब में, गुरु साहिब ने

यह शबद गायाः

जीवत मरै जागत फन सोवे। जानत आप मूसावै।

सफल सफा होई मिले खालक कऊ तऊ दरवेसु कहावै। तेरा जन है को ऐसा दिली दरवेस।

सादी गमी तमक नाही गुसा खुदी हिरस नहीं एस।50

शेख ताहिर इन शब्दों को सुनकर प्रसन्न हुआ और गुरु जी का अभिवादन किया। गुरु साहिब यहाँ कुछ देर रुके और पिफर आगे चले दिए।

वापस सुल्तानपुर लौटना:

पानीपत से गुरु साहिब और मरदाना पहले थानेसर से होते हुए वर्तमान सगरूर से होते हुए तहसील मोगा जिला पिफरोजपुर के तख्तूपुरा थाना निहाल सिंघवाला गाँव पहुँचे। गुरु साहिब की याद में

एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा भी है। तख्तपुरा से सतलुज को पार करते हुए गुरु जी सुल्तानपुर पहुँचे। सुल्तानपुर आप जी बहन नानकी और फूफा जय राम जी से मिले। इतने सालों बाद भाई जी से मिल कर बहन नानकी बहुत भावुक हो गईं लेकिन गुरु साहिब तो मोह-माया से अलग थे। बहन अपने भाई से मिल कर बहुत खुश हुई।

पट्टठी के जमींदारों को उपदेशः

सुल्तानपुर से गुरु जी मौजूदा पट्टठी हैबत खां पहुँचे। आपने यहाँ

के जमींदारों को जोतते देखकर पूछा कि आप जो खेती करते हैं और करवाते हैं उसका क्या परिणाम होगा? जमींदार ने अहंकार में कहा कि इससे हम आप जैसे संत को खाना खिलाते हैं, परिवार पालते हैं, रिश्तेदारों के साथ व्यवहार करते हैं। इस तरह यह किसानी होती है। हमारी आजीविका का मुख्य साधन है। गुरु साहिब ने जमींदार का उत्तर ध्यान से सुना और कहा, आत्मा की मुत्तिफ के लिए आप क्या करते हैं? वह एक और तरह की किसानी होती है जिसके साथ आत्मा प्रफुल्लित होती है। तब किसानों ने कहा कृपया हमें भी बतायें

ऋतो गुरु जी ने ये शब्द पढ़ेः-

इह तन धरती बीज करमा करो सलिल आपाऊ सारिंगपाणी। मन किरसाण हरि हृदय जमाई लै इहु पावसि पद निरबाणी। काहे गरबसि मूडे माइआ।51

यह सुनकर जमींदारों ने गुरु जी को प्रणाम किया और उनके चरणों में पड़े। गुरु साहिब पट्टठी से आगे पश्चिम की ओर चल दिए।

तलवंडी:

पट्टठी से गुरु नानक देव जी और मरदाना खालडे और पिफर

घविंडी नगर होते हुए तलवंडी पहुँचे। खालड़े और घविंडी में भी गुरु नानकदेव जी की याद में गुरुद्वारे भी बने हुए हैं। इस प्रकार पूरब और दक्षिण की उदासी (प्रचार-यात्राद्धको लगभग 12 वर्ष लगे और 12 साल बाद तलवंडी पहुँचे। मरदाने को बहुत उत्साह था कि तलवंडी में परिवार और अपने सभी रिश्तेदारों से मिलेगा। तलवंडी में वे सभी से मिले और प्रसन्न हुए। गुरु नानकदेव जी भी अपने माता-पिता से मिले। माता तृप्ता बहुत व्याकुल थी। वे अपने पुत्र को देखकर प्रसन्न हुई और उन्हें अनेक आशीर्वाद दिए। कुछ महीने तलवंडी में रहने के बाद, गुरु साहिब उस आदमी को अपने साथ ले गए और सुमेर पर्वत की यात्र पर निकल पड़े।

सन्दर्भः

1.भाई गुरदास, वार पहली, पऊडी 24

2. वही

3.गु.ग्र. पृ. 662

4.गु.ग्र. पृ. 991

5.किरपाल सिंह, जनमसाखी परंपरा : ऐतिहासिक दृष्टिकोण से, न। 9

6. गु.ग्र. पृ. 729

7.देखें, वही, पृ. 729

8. गु.ग्र. पृ. 1291

9. गु.ग्र. पृ. 794

10.गु.ग्र. पृ. 729

11. त्रिलोचन सिंह, जीवन चरित्र, गुरु नानकदेव, पृ. 11

12. गु.ग्र. पृ. 124

13. गु.ग्र. पृ. 1289

14. गु.ग्र. पृ. 1289

15. गु.ग्र. पृ. 730

16. गु.ग्र. पृ. 730

17. गु.ग्र. पृ. 730

18. गु.ग्र. पृ. 1127

19. गु.ग्र. पृ. 957

20. गु.ग्र. पृ. 634

21. गु.ग्र. पृ. 1171

22. गु.ग्र. पृ. 467

23. गु.ग्र. पृ. 472

24. गु.ग्र. पृ. 472

25. गु.ग्र. पृ. 661

26. गु.ग्र. पृ. 358

27. त्रिलोचन सिंह, वही, पृ. 155

28. किरपाल सिंह, वही, पृष्ठ, 59

29. गु.ग्र. पृ. 416

30. त्रिलोचन सिंह, वही, पृष्ठ, 158

31. प्रिंसिपल, सतबीर सिंह, पृ. 98

32. किरपाल सिंह, वही, पृ. 12

33. गु.ग्र. पृ. 557

34. गु.ग्र. पृ. 349

35. किरपाल सिंह, वही, पृ. 65

36. त्रिलोचन सिंह, वही, पृ. 173

37. गु.ग्र. पृ. 352

38. गु.ग्र. पृ. 14

39. गु.ग्र. पृ. 663

40. गु.ग्र. पृ. 220

41. गु.ग्र. पृ. 992

42. किरपाल सिंह, वही, पृ. 81 (यह शब्द गुरु ग्रन्थ साहिब में नहीं है)

43. गु.ग्र. पृ. 223

44. गु.ग्र. पृ. 465

45. गु.ग्र. पु. 222

46. गु.ग्र. पृ. 642

47. गु.ग्र. पृ. 223

48. गु.ग्र. पृ. 686

49. गु.ग्र. पृ. 1197

50. किरपाल सिंह, वही, पृ. 88

51. गु.ग्र. पृ. 23

(हिंदी अनुवाद डॉ. शोभा कौर)